अनुराग

बाल पत्रिका

त्रैमासिक
अक्टूबर-दिसम्बर
2002
दस रुपये
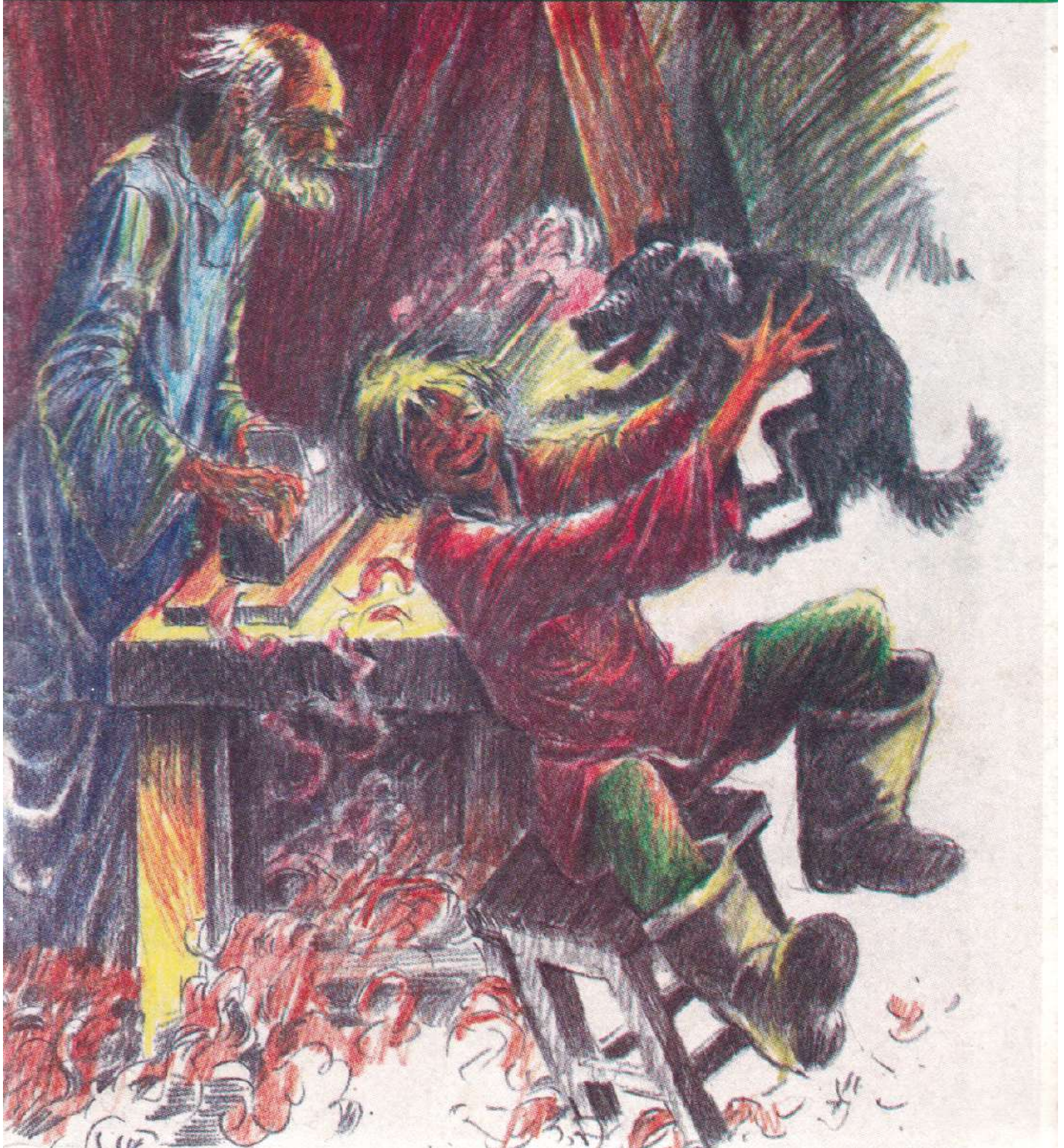
अक्टूबर-नवम्बर-दिसम्बर की कुछ महत्वपूर्ण तिथियां

23 अक्टूबर -

काकोरी काण्ड के शहीद एवं महान क्रांतिकारी अशफाक़उल्ला का जन्मदिन।

26 अक्टूबर-

अन्याय और जुल्म के ख़िलाफ संघर्षरत, भारतीय आज़ादी के प्रणेता तथा वाणी और कलम के सिपाही, गणेश शंकर विद्यार्थी का जन्म दिवस।

27 अक्टूबर -

शहीद क्रान्तिकारी यतीन्द्र नाथ दास का जन्मदिवस

7 नवम्बर (1917) -

अक्टूबर क्रान्ति (रूसी क्रान्ति) दिवस। मानवता की मुक्ति का वह महत्वपूर्ण ऐतिहासिक दिवस जब आम जनता के अपने राज्य की स्थापना हुई थी। महान क्रान्तिकारी ब्लादीमिर इल्यीच लेनिन के नेतृत्व में रूसी क्रांति सम्पन्न हुई थी और सोवियत संघ की स्थापना हुई थी।

13 नवम्बर -

जनपक्षधर लेखक एवं कवि गजानन माधव मुक्तिबोध का जन्म दिवस।

28 नवम्बर (मित्रता दिवस) -

फ्रेडरिक एंगेल्स का जन्म दिवस। जनता के मुक्तिकामी दर्शन के प्रणेता, जर्मनी के राइन प्रांत में जन्मे और कार्ल मार्क्स के अनन्य मित्र एवं सहयोगी फ्रेडरिक एंगेल्स का जन्म दिवस जिसे पूरी दुनिया में मित्रता दिवस के रूप में मनाया जाता है।

17 दिसम्बर, (1927)-

काकोरी काण्ड के शहीद राजेन्द्र लाहिड़ी का शहादत दिवस

19 दिसम्बर, (1927)-

काकोरी काण्ड शहादत दिवस। आज़ादी के इतिहास का वह काला दिन जब काकोरी काण्ड के तीन वीर सपूतों पं. रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाक़उल्ला एवं रोशन सिंह को फांसी दी गयी थी।

26 दिसम्बर -

मानवता की मुक्ति के प्रतीक पुरुष एवं चीनी क्रांति के जनक माओ-त्से-तुङ का जन्म दिवस।

अनुराग
बाल पत्रिका

त्रैमासिक, वर्ष 7, अंक 4, अक्टूबर-दिसम्बर 2002

सम्पादक
कमला पाण्डेय

सह सम्पादक
अभिनव सिन्हा

सज्जा
रामबाबू

स्वत्वाधिकारी कमला पाण्डेय के लिए यशकरण लाल द्वारा डी-68, निराला नगर, लखनऊ से प्रकाशित तथा मुद्रक बाबूराव बोरकर द्वारा शान्ति प्रेस, नयागांव (पश्चिम), लखनऊ से मुद्रित।

सम्पादकीय कार्यालय
डी-68, निराला नगर
लखनऊ-226020

इस अंक का मूल्य : दस रुपए
वार्षिक : चालीस रुपए

इस अंक में

संवाद

प्यारे बच्चो,

दशहरा-दीपावली तो तुमने खूब जोर-शोर से मनाया होगा, खूब मिठाइयां खाई होंगी, खूब पटाखे छोड़े होंगे। इन त्योहारों में खुशियां मनाने के साथ-साथ इनके संदेश पर भी तुमने जरूर ही गौर किया होगा। दशहरा हमें यह संदेश देता है कि अन्याय पर न्याय की विजय हो पर इसके लिए हमें अन्याय के खिलाफ लड़ना होता है। जीवन में जहां कहीं भी अन्याय दिखे, सच्चे लोगों को हमेशा उसके खिलाफ डटकर खड़ा होना चाहिए, तभी न्याय की जीत होती है। इसी तरह से दीपावली में अंधेरे पर प्रकाश की विजय होती है।

दुनिया के जब सारे बच्चों को खुशियां मिलेंगी तभी सबके जीवन से अंधेरा मिटेगा और सच्ची दीवाली मनेगी। इस दिन तो मैं भी तुम्हारे साथ खूब पटाखे छोड़ूंगी और दीये जलाऊंगी।

बच्चों, इस अंक से, अनुराग, अलग-अलग देशों के विश्व प्रसिद्ध लेखकों की प्रसिद्ध कृतियों से परिचित कराया जायेगा, जो विश्व की अमूल्य धरोहर है। इसकी शुरूआत हम विश्व प्रसिद्ध रूस के महान लेखक चेखव की कहानी 'लाखी' से शुरू कर रहे हैं। रूस के जिन लेखकों की कहानिथां हम प्रस्तुत करेंगे उनका परिचय भूमिका के रूप में 'प्रेम की लेखनी' नामक लेख से किया जा रहा है। हमारी यह प्रस्तुति तुम्हें कैसी लगी, लिखना।

ढेर सारे प्यार और शुभकामनाओं के साथ तुम्हारी नानी

पोस्ट बाक्स

अनुराग

इसमें है ऐसा जादू जो
सबका मन मोह लेता है
रोचक कहानियां
और कविताएं पढ़कर
सबका मन बहल जाता है।
बच्चे भी बन जाते हैं
कवि-कवयित्री
लेखक-लेखिका
रोचक कहानियां और
मजेदार कविताएं छपवाकर।

शेफाली श्रीवास्तव

पुस्तक का महत्व

पुस्तक पढ़ना सबको भाता है,
मन आनंदित हो जाता है,
पुस्तक पढने से ज्ञान बढ़ता है,
मास्टर जी से डण्डा भी कम पढ़ता है,
पुस्तक पढ़कर ही तो,
संसार कैसा है हमने जाना,
बोर होने से अच्छा ही है,
पुस्तकों का अध्ययन करना

अनुभव

प्रेम की लेखनी

19वीं सदी के महान लेखकों दोस्तोयेव्स्की, चेखोव, तोलस्तोय के नाम सारा संसार जानता है। ये लेखक और इनका साहित्य रूस का राष्ट्रीय गौरव हैं। हम सोवियत लागों को 19 वीं सदी के अपने साहित्य पर गर्व है, क्योंकि यह मानव प्रेम से, मानव वेदनाओं के प्रति सहानुभूति और मानव सुख के सपने से जन्मा साहित्य है, हमें अपने साहित्य पर गर्व है क्योंकि यह सदा भलाई का साहित्य रहा है, हिंसा, क्रूरता और जातीय शत्रुता का पर्दाफाश करता रहा है और संसार के सभी लोगों को मैत्री एवं भाईचारे का संदेश देता रहा है। हमें अतीत के रूसी साहित्य पर गर्व है, क्योंकि वह सदा सत्य और न्याय की रक्षा करता था, उन लोगों के समर्थन में आवाज बुलंद करता था, जो अन्याय और बुराई का शिकार थे।

19वीं शताब्दी के रूसी लेखकों में एक भी ऐसा नहीं था, जिसने बच्चों के बारे में या बच्चों के लिए न लिखा हो। बच्चों को ही हमारे साहित्यकार जनता का, देश का भविष्य मानते थे। वे बड़ों की क्रूरता से और समझ के अभाव से बच्चों की रक्षा करने की चेष्टा करते थे। उन्हे इस बात की चिंता थी कि किस तरह बच्चे बुद्धिमान, बलवान, भले और सुखी लोग बनें।

रूस में 19वीं सदी जनता की कंगाली और कष्टों का युग थी। 1861 तक देश में भूदास प्रथा थी। इस प्रथा के अनुसार किसी जमींदार की जमीन पर जो भी किसान रहता था वह दास होता था। जमींदार किसानों को बेच और खरीद सकता था। उसके मन में आता तो वह उन्हे कोड़े मार-मारकर उनकी जान ले सकता था और कोई उससे पूछने वाला नहीं था।1861 में जार ने भूदास प्रथा खत्म कर दी, लेकिन इसके बाद भी जनता के जीवन में कोई विशेष सुधार नहीं हुआ। पहले की ही भांति अमीर अमीर थे और गरीब गरीब। पहले की ही तरह गरीब आदमी भूख, जीतोड़ मेहनत और अमीरों के जुल्म से पीड़ित था।

बच्चों की दशा विशेषत: दयनीय थी। यहां तक कि अमीर घरों के बच्चे भी, जिन्हे किसी बात की तंगी न थी, और जिन्हे पढ़ने लिखने के अवसर प्राप्त थे, वे भी जीवन के सच्चे आनन्द और आजादी से वंचित थे। और गरीबों के बच्चों को छोटी उम्र से ही दो जून की रोटी कमाने के लिए मेहनत करनी पड़ती थी, प्राय: वे सभी अनपढ़ रहते थे, उन्हे निरंतर कठिनाइयों से जूझना पड़ता था और बहुधा असमय ही वे मौत का ग्रास बनते थे।

फ्योदोर दोस्तोयेव्स्की

फ्योदोर दोस्तोयेव्स्की ने एक कहानी लिखी थी 'क्रिस्मस और बालक'। इस कहानी का नन्हा नायक गरीबों के ठंडे रैन बसेरे में रात को मर गई मां के पास जागता है। वह सोचता है कि मां सो रही है और बाहर चला जाता है। घरों की खिड़कियों में वह देखता है कि कैसे खाते-पीते लोग क्रिस्मस मना रहे है। आखिर में वह भूखा, ठंड से ठिठुरता हुआ एक मकान की दीवार के पास ही खुले अहाते में सो जाता है और फिर अपनी मां की ही तरह कभी नहीं जागता।

बेशक, दोस्तोयेव्स्की ने यह कहानी इन अभागों के लिए नहीं लिखी थी, जो पढ़ भी नहीं सकते थे। उन्होंने यह कहानी उन बच्चों के लिए लिखी थी, जो गर्म घरों में रहते थे और सुंदर पुस्तकें पढ़ते थे ताकि उनके दिलों में दुखियों के लिए करुणा और सहानुभूति जागे।

एक दूसरे महान रूसी लेखक अन्तोन चेखोव ने लिखा था:"बचपन में मैंने बचपन न देखा"। वह एक छोटे से शहर के छोटे से दुकानदार के बेटे थे। छोटी उम्र में ही उन्हे घर का काम करना पड़ा, पिता की दुकान में हाथ बंटाना पड़ता था, और दुकान भी ऐसी थी कि वहां गर्मियों में भी सीलन और ठंड होती थी। इन अभावों ने उनके स्वास्थ्य की जड़ काट दी। चवालीस वर्ष की आयु में तपेदिक से उनकी मृत्यु हो गई। बच्चों के बारे में चेखोव की कहानियां प्रेम, करुणा और बाल-आत्मा की गहरी समझ से ओतप्रोत हैं। इनमें न केवल दुख की, बल्कि हंसी-खुशी की भी बहुत सी बातें हैं। बचपन में

उन्होने स्वयं बहुत कम खुशी पायी थी, अतः वह भली-भांति समझते थे कि बच्चों को इस खुशी की कितनी आवश्यकता होती है और अपनी रचनाओं में उन्हे इसे प्रदान करने का प्रयत्न करते थे। वह बड़ों का यह आह्वान करते थे कि बच्चों के साथ उनके सम्बन्ध "सबोध सत्य" पर आधारित होने चाहिये। चेखोव के मित्र लेखक कुप्रिन ने अपने संस्मरणों में लिखा है कि किस तरह मृत्यु से कुछ समय पूर्व क्रीमिया में चेखोव की एक चार साल की बच्ची से मैत्री हो गयी: "नन्ही बच्ची और अधेड़, उदास मनुष्य, विख्यात लेखक के बीच एक विशिष्ट, गम्भीरता और विश्वास भरी मित्रता के सम्बन्ध स्थापित हो गये। बड़ी देर तक वे दोनों बरामदे में बेंच पर बैठे रहते थे; चेखोव बड़े ध्यान से, एकाग्रचित्त होकर बच्ची की बातें सुनते थे... "

बच्चों का स्वर सुन पाना, उनके जीवन का सच्चा चित्रण करना, उन्हे शिक्षा देने से पहले उन्हे समझने का यत्न करना – सभी रूसी लेखकों ने इस पथ का अनुसरण किया। लेव तोलस्तोय कहते थे: "स्कूली छात्र भले ही नन्हे मानव हैं, लेकिन ऐसे मानव हैं, जिनकी हमारे जैसी ही आवश्यकताएं हैं और जो हमारे भांति ही सोचते-विचारतें हैं।"रूसी बाल-साहित्य की शक्ति इसी बात में है कि बच्चों से बातचीत करते हुए वह उनका आदर करता है।

हमारे महान लेखक बच्चों के लिए साहित्य को वह सजीव सूत्र मानते थे, जो "बच्चों के कमरे से बाहर ले जाता है और सारे संसार से जोड़ता है"। ये मामिन-सिबिर्याक के शब्द हैं, जिन्होने बच्चों के चरित्र-निर्माण में पुस्तकों की भूमिका के बारे में लिखा था:

अन्तोन चेखोव

"मेरे लिए अभी तक प्रत्येक बाल-पुस्तक जीवनदायिनी है, क्योंकि वह बाल-आत्मा को जगाती है, बच्चे के विचारों को निश्चित दिशा में बढ़ाती है और लाखों बाल-हृदयों के स्पंदन में उसके हृदय का स्पंदन मिलाती है।" बाल-पुस्तक वासंती किरण है, जो बाल-आत्मा की सुप्त शक्तियों को जागृत करती है और इस उर्वरा धरती पर डाले गये बीजों को उगाती है। इस पुस्तक की बदौलत ही सब बच्चे एक विराट आत्मिक परिवार के सदस्य बन जाते हैं, जिसमें कोई नृवंशीय और भौगोलिक सीमाएं नहीं होतीं।"

बच्चों के प्रति अपने गम्भीर रुख की बदौलत ही रूसी लेखक बाल-पुस्तकों की रचना में अपने उत्तरदायित्व को भलीभांति समझते थे। प्रसिद्ध कहानी 'मुमू' के लेखक इवान तुर्गनेव ने लिखा था: "बच्चों के लिए अच्छी पुस्तकें लिखना अत्यंत कठिन है। इसके लिए विषय का गम्भीर एवं सम्पूर्ण अध्ययन, मानव हृदय और विशेषतः बाल-हृदय का ज्ञान, सरल स्पष्ट भाषा में, लीपा-पोती और फूहड़पन के बिना बात कहने की योग्यता तथा धीरज ही पर्याप्त नहीं है। यह सब तो होना ही चाहिये और इसके अतिरिक्त लेखक के नैतिक एवं सामाजिक विकास का उच्च स्तर होना भी नितांत आवश्यक है।"

यह अंतिम शर्त – "नैतिक एवं सामाजिक विकास का उच्च स्तर" – विशेषतः महत्वपूर्ण है। बच्चों के लिए लिखने वाला सर्वप्रथम नैतिक दृष्टि से अच्छा व्यक्ति होना चाहिये। उसे अच्छा नागरिक होना चाहिये –उसके मन में अपने जनगण ,अपनी मातृभूमि के प्रति प्रेम होना चाहिये। अपने उच्च नागरिक और नैतिक गुणों के बल पर ही रूसी लेखक बच्चों के लिए अपने जमाने के जीवन का सच्चा चित्रण कर सके, उन्होने बुराइयां नहीं छिपाईं और अच्छाई को भी नहीं भूले।

मामिन-सिर्बियाक ने एक बार लिखा: "हमारे रूसी जीवन की कमियां, उसकी बुराइयां सभी रूसी लेखकों का मनपसंद विषय हैं। लेकिन यह तो केवल नकारात्मक पहलू हुआ, दूसरा सकारात्मक पहलू भी तो होना चाहिये। वरना, हम जी न सकते, सांस न ले सकते, सोच न सकते... कहां है यह जीवन ? कहां हैं वे रहस्यमयी स्रोत, जिनसे रूस का यातनाओं भरा इतिहास रिसता रहा है ? कहां है वे पथ जिन पर हमारे महाबली चला करते थे ?"

इन सब प्रश्नों का उत्तर इस पुस्तक में संकलित कहानियां देती हैं। इनमें पिछली सदी के बुर्जुआ-जारशाही रूस के जीवन का पचास वर्ष का काल प्रतिबिम्बित हुआ है।

इन कहानियों को पढ़ते हुए तुम इनके लेखकों और नायकों के साथ पुराने मास्को और सेंट पीटर्सबर्ग की झलक देखोगे , क्रीमिया के सूर्य स्नान तट पर टहलोगे और साइबेरिया की खुली सड़क पर चलोगे, जहां सायं-सायं करती ठंडी हवाएं बहती हैं और शरद ऋतु की कभी न खत्म होने वाली बारिश बरसती है। कल्पना के पंख तुम्हे गर्मियों में उराल के जंगलों में ले जाएंगे, जहां पहाड़ियों और फर वृक्षों के घने कुंजों में हिरन विचरते हैं। और तुम

देखोगे कोहकाफ़ की चोटियां, हिंद महासागर में पंहुचोगे, जहां रूसी मल्लाह जहाज पर संसार का चक्कर लगा रहे होते हैं। 'बेझिन चरागाह' कहानी के लेखक के साथ तुम गर्मियों की छोटी सी रात रूस के केंद्रीय भाग में, काली मिट्टीवाले उपजाऊ इलाके में बिताओगे, जहां दक्षिणी रूस के वनहीन सपाट मैदान – स्तेपियां – उत्तर के घने जंगलों से मिलते हैं और खेत अनाज भी उतने ही खुले हैं तथा नदियां वैसे ही मंथर गति से बहती हैं, जैसे सौ साल पहले।

अलेक्सान्द्र कुप्रिन

रूस के इन पथों पर, इन रास्तों पर, जो हजारों मील तक चले गए हैं, तुम किसानों, शिकारियों, कारीगरों, सरकस के नटों, लाइनमैनों, फ़ौजी अफसरों, सिपाहियों, मल्लाहों, कालेपानी से भागे कैदियों, शिक्षकों, अमीर साहबों और उनके नौकरों – भांति-भांति के लोगों से मिलोगे।

और तुम्हें अपने बहुत से हमउम्र भी मिलेंगे – नगरों और देहातों के ग़रीब बच्चे, अभागे अनाथ, जिनके माता-पिता असमय ही मर गए, या जिन्हे ग़रीबी की वजह से अपने बच्चों को कहीं कुछ काम सिखाने के लिए बिठाना पड़ता था, ताकि वे इन्सान बन सकें। साथ ही ऐसे शहजादे भी मिलेंगे, जो अपने बाप की दौलत और नौकरों की जी-हुज़ूरी से बिगड़ गए।

ध्यान देने लायक बात है: रूसी लेखक जब बच्चों के बारे में लिखते हैं, तो वे प्राय: सदा ही बच्चों के कष्टों, दुखों की बात करते हैं। 'हिरनौटा' कहानी का नन्हा ग्रिशूक सख़्त बीमार है। 'घर की ललक' कहानी में बालक को रास्ते में सर्दी लग जाती है और वह बीमार पड़ जाता है। दोस्तोयेव्स्की की कहानी का नायक दुखी है, क्योंकि मास्टर और क्लास के लड़के हर वक्त उसका मजाक उड़ाते रहते हैं। 'कोहकाफ़ का बन्दी' कहानी में तातार बच्ची दीना रूसी अफसर झीलिन की पीड़ा को अपनी पीड़ा की तरह महसूस करती है। लेओनीद अन्द्रेयेव की कहानी में बावर्चिन का बेटा पेत्का दहाड़े मार-मारकर रोता है, क्योंकि उसे शहर लौटना होगा, जहां सुबह से शाम तक कोल्हू के बैल की तरह काम में जुता रहना होगा, मालिक की गालियां सुननी होंगी और थप्पड़ खाने होंगे। ग्रिगोरोविच की कहानी 'रबड़ का पुतला' का नायक सरकस में तमाशा दिखाते हुए ऊंचे बांस से गिरकर मर जाता है।

"पर यह तो केवल नकारात्मक पहलू है," मामिन-सिर्बियाक के साथ हम भी आपत्ति कर सकते थे, अगर इन सब कहानियों के लेखकों ने इस अंधकारमय, असह्य जीवन का उज्जवल पहलू न दिखाया होता, अगर इन कहानियों में दरिद्रिता , अन्याय और दुख के पहाड़ों में से भलाई और सत्य के सशक्त सोते न फूटते होते।

रूस के एक सबसे बड़े मानवतावादी लेखक अंतोन चेख़ोव की कहानी 'लाखी' एक कुत्ते के बारे में है। लेखक ने यह विषय अकारण ही नहीं चुना। चेख़ोव ने लिखा था: "बच्चों के जीवन और यादों में घरेलू जानवरों की भूमिका निस्संदेह हितकर होती है। हम में कौन ऐसा है जिसे नहीं याद – ताकतवर पर उदार कुत्ते, पिंजड़े में मरती चिड़ियां और बूढ़ी बिल्लियां , जो हमें हमेशा माफ़ करती थीं, जब हम शरारत में उनकी दुम दबाकर उन्हे भयानक पीड़ा पहुंचाते थे ? मुझे तो कभी-कभी लगता है कि हमारे घरेलू जीवों में जो सहनशीलता, वफ़ादारी, निष्कपटता और सबकुछ माफ करने की भावना पायी जाती है, उसका बच्चे के मनोमस्तिष्क पर जितना प्रबल और सकारात्मक प्रभाव पड़ता है, उतना मास्टर जी की नीरस बातों का नहीं।"

'लाखी' वफ़ादारी की कहानी है। यह एक कुतिया की कहानी है, जो शराबी तरखान लुका और उसके पोते फ़ेद्युश्का की कोठरी में रहती थी। उसे मार भी खानी पड़ती थी और भूख भी सहनी पड़ती थी, पर वह इसे ही अपना घर मानती थी और इन लोगों को अपने करीबी लोग। अचानक कुतिया शहर के भीड़-भड़क्के में खो जाती है। जानवरों का तमाशा दिखानेवाला सरकस का कलाकार उसे अपने घर ले जाता है, उसे अच्छा खाना खिलाता है, तरह-तरह के करतब सिखाता है, उसके साथ नेकी और प्यार का बर्ताव करता है। लेकिन कुछ महीने बाद कुतिया जब अपने मालिकों को देखती है, तो वह उनके पास भाग जाती है। और सच्चे अर्थों में सुखी महसूस करती है। कहानी पढ़ते हुए हम भी कुतिया, तरखान लुका और बालक फ़ेद्युश्का के साथ खुश होते हैं। क्योंकि कुतिया का लौट आना प्रेम की विजय है, जो न अच्छे खाने से और न मीठी बातों से ख़रीदा जा सकता है।

मामिन-सिर्बियाक की कहानी 'हिरनौटा' भी वफ़ादारी

की, प्रेम की सर्वविजयी शक्ति की कहानी है। बीमार बच्चा ग्रिशूक अपने दादा से हिरनौटे का शिकार कर लाने को कहता है। बूढ़े शिकारी के लिए पहाड़ों में भटकना आसान नहीं, पर वह पोते की जान बचाने की ख़ातिर तीन दिन तक ताइगा जंगल में भटकता रहता है और आखिर हिरन की खुरी देख लेता है। फिर वह काफी देर तक हिरनौटे को नहीं ढूंढ पाता, क्योंकि मां हिरनी अपनी जान ख़तरे में डाल कर शिकारी को अपने बच्चे से दूर ले जाने की कोशिश करती है। पर बूढ़ा भी हठी है। आखिर वह हिरनौटे को ढूंढ लेता है। और तभी एक अप्रत्याशित बात होती है। हम पढ़ते हैं: "बस एक क्षण और, नन्हा हिरनौटा अंतिम चीख के साथ घास पर लुढ़क जाता, पर इसी क्षण बूढ़े शिकारी को याद हो आया कि कितनी वीरता के साथ इसकी मां इसकी रक्षा कर रही थी, यह भी याद हो आया कि कैसे उसके ग्रिशूक की मां ने अपनी जान देकर बेटे को भेड़ियों का निवाला होने से बचाया था। बूढ़े येमेल्या के दिल पर सहसा चोट सी लगी, और उसने बंदूक नीची कर ली।"

कहानी का अंत अनुपम है। येमेल्या अपनी टूटी-फूटी झोंपड़ी में लौटता है, वह बीमार पोते की बात पूरी न कर सका था। वह बच्चे को अपने असफल शिकार की कहानी सुनाता है। और बच्चा हंसता है। रात बीते तक वह दादा से पूछता रहता है कि हिरनौटा कैसा था और कैसे वह भाग गया। लेखक इन शब्दों के साथ कहानी खत्म करता है: "...बच्चा सो गया और सारी रात उसे सपने में नन्हा सा पीला-पीला हिरनौटा दिखायी देता रहा, जो जंगल में अपनी मां के साथ घूम रहा था; बूढ़ा भी अलावघर पर सो रहा था और नींद में मुस्कुरा रहा था।"

इस सीधी-सादी सी कहानी में कितना मर्म है! इसमें प्रेम के नाम पर, जिसे प्रेम करते हो उसके लिए किए गए आत्मबलिदान के सौंदर्य का गुणगान किया गया है। और इसमें यह भी दिखाया गया गया है कि कैसे भलाई भलाई को जन्म देती है: जानवर के प्रति सहृदयता दिखाई तो उससे इन्सान का भी भला हुआ। शिकारी दादा की सहृदयता और जिंदा बच गए हिरनौटे के लिए खुशी ग्रिशूक के लिए मारे गए पशु के मांस से अधिक आरोग्यकर सिद्ध होती है।

बच्चे और बड़े... उनके बीच सम्बन्धों का चित्रण करते हुए रूसी लेखक सदा बच्चों का पक्ष लेते हैं। ग्रिगरोविच की कहानी 'रबर का पुतला' के कलाबाज बेक्कर से हमें नफरत होती है क्योंकि वह बड़ा और बलवान होते हुए भी अपनी शक्ति का उपयोग नन्हे पेत्या की रक्षा के लिए नहीं करता, बल्कि उसके दिल में डर बिठाने, उससे अपनी हर बात मनवाने के लिए करता है। स्तन्युकोविच की कहानी 'मक्सीम्का' में अमरीकी जहाज़ का कप्तान भी घिनौना है, जो हब्शियों को चोरी-चोरी बेचता है। जब नीग्रो लड़का मल्लाहों को बताता है कि कैसे उसका मालिक उसे पीटता था, तो पाठक को सचमुच इस बात पर खुशी होती है कि दुष्ट कप्तान जहाज दुर्घटना में मर गया।

बड़े सदा बच्चों से अधिक ताकतवर हाते हैं। पर बच्चे केवल उनकी ताकत पर ही निर्भर नहीं होते। वे बड़ों पर इसलिए भी निर्भर होते हैं कि बड़े उन्हे रोटी, कपड़ा देते हैं, रहने को जगह देते हैं। परंतु जो आदमी अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए इस निर्भरता का लाभ उठाता है, वह दुष्ट है, बुराई करता है। रूसी साहित्य यही मानता था और उस मानव का यशगान करता था, जिसके मन में बच्चों के लिए प्रेम है, जो बच्चों की सेवा करता है, उन्हे मुसीबतों से, अन्याय से बचाता है।

तेलेशोव की कहानी 'घर की ललक' में हम कालेपानी से भाग आए अपराधी को देखते हैं, जो बीमार पड़ गए बच्चे को बचाने के लिए उसे शहर में ले जाता है और पुलिस के हाथ पड़ता है। हम नहीं जानते कि उसने क्या अपराध किया था लेकिन हम देखते हैं कि वह स्वेच्छा से अपनी आजादी और हो सकता है, जीवन की भी बलि देता है, ताकि एक अन्जान बच्चे को मौत के मुंह से बचा सके। और उसका यह पराक्रम हमारे हृदय को छू जाता है।

इवान तुर्गनेव

हम एड्सवड्र्स जोकर पर भरोसा करने लगते हैं, जो पेत्या को बेक्कर के घूंसो से बचाता है। हमें शराबी मल्लाह भी अच्छा लगता है, जो स्तन्युकोविच की कहानी में नीग्रो बच्चे को सरंक्षण देता है, प्यार से उसका नाम मक्सीम्का रखता है, अपनी थोड़ी सी रसद में से उसके लिए जूते और कपड़े सीता है और यहां तक कि बच्चे के प्रति अपना उत्तरदायित्व और पिता का स्नेह अनुभव करते हुए वह पहले की तरह नशे में धुत्त होना भी छोड़ देता है।

इन कहानियों में तुम्हे कुछ ज़िद्दी, बिगड़े बच्चे

मिलेंगे, जैसे कि 'मदारी' कहानी का ल्लिल्ली। पर तुम इन कहानियों में कोई दुष्ट, नीच या कमीना बच्चा नहीं. पाओगे, जैसे कि कुछ बड़े इन कहानियों में हैं। ल्लिल्ली जैसे बच्चे भी अपने स्वार्थ के लिए स्वयं इतने दोषी नहीं हैं, जितने कि उनका लालन-पालन करने वाले बड़े लोग। बच्चों में तो मानव स्वभाव के सभी सद्गुण सहज रूप में होते हैं, वे निष्कपट और निर्दोष होते हैं। 'बेझिन चरागाह' कहानी का लेखक हमें अनपढ़ भूदास बच्चों के अंध विश्वासों में भी कैसी सहज सरलता और सच्ची काव्यात्मकता दिखाता है! और 'कोहकाफ़ का बन्दी' में दुबली-पतली दीना का हृदय सहानुभूति, अनुकम्पा और प्रेम का कैसा अथाह स्रोत है!

बच्चों में जाति या नस्ल का कोई अंधविश्वास नहीं होता, जो कुछ बड़ों में पाया जाता है। दीना को अपने पिता के क़ैदी पर रहम आता है और वह उसकी मदद करती है, हालांकि गांव वाले रूसियों को अपना दुश्मन समझते हैं। दीना के लिए झीलिन सबसे पहले एक भला आदमी है, जो खिलौने बनाकर बच्चों को खुशियां बांटता है। 'मक्सीम्का' कहानी मानव-बंधुत्व की भावना में पगी है। रूसी मल्लाहों के बीच नन्हा नीग्रो बालक अपने आप को इन्सान महसूस करता है, बड़ों की हितचिंता और स्नेह पाता है और इसका जवाब बाल-हृदय के असीम प्रेम और लगाव से देता है।

बड़ों का अनुभव उन सब के लिए सदा बहुत महत्वपूर्ण होता है, जो अभी किशोर हैं, अनुभवहीन हैं। बचपन में बोए गए भलाई के बीज बड़ों के बर्ताव में भलाई की पुष्टि पाकर ही सबसे अच्छी तरह विकसित होते हैं। मौत के खतरे के सामने भी झीलिन जिस साहस और आत्मसम्मान का परिचय देता है, वह आकर्षक है। गार्शिन की कहानी 'सिग्नल' के लाइनमैन सेम्योन का पराक्रम अनुपम है। वह अपनी जान खतरे में डालकर सवारी गाड़ी को उलटने से बचाता है। और हमें यह देख कर हैरानी नहीं होती कि वही वसीली, जिसने रेलवे के अफ़सरों के अन्याय का बदला लेने के लिए रेल उखाड़ दी थी, सेम्योन का खून से रंगा रूमाल उठा लेता है और गाड़ी को रोकता है। हमें इस पर आश्चर्य नहीं होता, क्योंकि सेम्योन की आत्मबलिदान की तत्परता देखकर, यह देखकर कि किस तरह वह अपनी जान देकर भी बेगुनाह लोगों को बचाना चाहता है, कुछ और किया ही नहीं जा सकता। सेम्योन की यह तत्परता सभी तर्कों से अधिक अच्छी तरह हमारे मन में यह बात बिठाती है कि मानव प्रेम और अंतःकरण ही मनुष्य के कर्मों का सबसे बड़ा मापदंड हैं।

ये कहानियां पढ़कर तुम इन पर मनन करना। याद करना कि कैसे दोस्तोयेव्स्की के नायक को यह बात सताती है कि मां से मिलने पर उसने रुखाई बरती थी, कैसे मां के प्रति जो प्रेम उसने प्रकट नहीं किया वह उसके मन को कंचोटता है । कल्पना में उराल के शिकारी येमेल्या के साथ शिकार पर जाना और सेम्योन के साथ तेजी से चली आ रही रेलगाड़ी के रास्ते पर खड़े हो जाना। और तुम देखोगे कि यहां वर्णित घटनाएं भले ही दुख भरी हैं, लेकिन फिर भी जीवन आशाहीन नहीं, उसमें ऐसा भी कुछ है, जिसके लिए खुश होना, कष्ट सहना और संघर्ष करना चाहिए। तुम देखोगे कि भलाई हर जगह है, एक आदमी से दूसरे में फैलती है और इस तरह वह अमर है, वह एक जादुई शक्ति की भांति एक आत्मा से दूसरे को मिलाती है, बच्चों और बड़ों को एक सूत्र में पिरोती है, अंधे को दृष्टि और मूर्ख को बुद्धि प्रदान करती है, बुरे को भला और उदासीन को सहृदय बनाती है, सभी लोगों को एक मानव परिवार में बांधती है।

जब मामिन-सिबिंयाक की पुस्तक 'सुनो कहानी, बिटिया रानी' प्रकाशित हुई थी, तो उन्होने अपनी माता को लिखा था: "यह मेरी प्यारी पुस्तक है – यह प्रेम की लेखनी से लिखी गई है, इसलिए यह शेष सभी रचनाओं से अधिक समय तक बनी रहेगी।"

'हिरनौटा' पुस्तक में संकलित कहानियां इसीलिए आज तक पढ़ी जाती हैं कि ये "प्रेम की लेखनी" से लिखी गई हैं।

इन कहानियों के लिखनेवाले कब के इस संसार में नहीं रहे। पुराने जमाने का ग़रीबी और भुखमरी का मारा रूस भी कब का वैसा नहीं रह गया। लेकिन सोवियत संघ के विशाल विस्तार में जब उन लोगों के वशंज और आत्मिक उत्तराधिकारी रहतें हैं। जिन्होंने पुराने जमाने में भलाई के लिए श्रम किया, कष्ट उठाये। हमारे समसामयिक लोग धरती के प्रति , प्रकृति के प्रति, श्रम के प्रति, बच्चों और सभी लोगों के प्रति प्रेम को उन दिनों से धरोहर में मिली अमर ज्योति के रूप में अपने विचारों और कार्यों में बनाये हुए हैं। यह वही प्रेम भावना है, जिसका गुणगान युवा पीढ़ी के लिए लिखी अपनी रचनाओं में रूस के महान लेखकों ने किया था।

• ईगर मत्याशोव

कहानी

लाखी

❑ अन्तोन चेख़ोव

कहा जाता है कि 'लाखी' कहानी में चेख़ोव ने पशुओं को साधनेवाले विख्यात सरकस कलाकार व्लादीमिर दूरोव के साथ हुई घटना वर्णित की है।

महान मानवतावादी लेखक चेख़ोव पशु पक्षियों को बहुत प्यार करते थे। उनके घर में सदा कोई न कोई पशु-पक्षी रहते थे। इसमें डेक्शंड नस्ल के कुत्ते ब्रोम और खीना थे, दोगले पिल्ले लाखी और बेलालोबी (सफेद माथेवाला) थे, एक सारस भी उन्होने पाल रखा था। दूरोव चेख़ोव के अच्छे मित्र थे। उन्होंने पशुओं को साधने की नयी विद्या की नींव रखी। इस विद्या की विशिष्टता यह थी कि दूरोव चाबुक की मदद से नहीं, बल्कि प्रेम एवं स्नेह से तथा प्रोत्साहन देकर जानवरों को तरह-तरह के करतब सिखाते थे। दूरोव के पोते-परपोते अब तक इस परम्परा को बनाए हुए हैं। वे सोवियत सरकस में काम करते हैं।

चेख़ोव को सरकस देखने का शौक था।

'लाखी' कहानी पहली बार 'नोवये व्रेम्या' समाचार पत्र में 25 दिसम्बर 1887 को छपी। इसके पांच वर्ष पश्चात ही चेख़ोव इसे बच्चों के लिए पुस्तक के रूप में छाप सके। पुस्तक अत्यंत लोकप्रिय हुई। "खाने के समय... बच्चे एकटक मुझे देखते रहते हैं और इस इंतजार में रहते हैं कि मैं कोई बहुत ही बुद्धिमत्तापूर्ण बात कहूंगा। उनके विचार में मैं मेधावी हूं, क्योंकि मैंने 'लाखी' की कहानी लिखी है" – अपने भाई को एक पत्र में चेख़ोव ने मजाक के साथ लिखा था। उनके जीवनकाल में (1860-1904) 'लाखी' के दस संस्करण छपे। आज तक यह सोवियत बच्चों की एक सबसे प्रिय पुस्तक है।

बच्चों को अन्तोन पाब्लोविच चेख़ोव की दूसरी कहानियां – 'वान्का', 'भगोड़ा', 'स्तेपी', 'लड़के', 'घटना', 'नींद आ रही है' और 'बच्चे' भी बहुत पसंद है। सरल और सुंदर भाषा में लिखी इन कहानियों में लोगों और जीवन का गहरा ज्ञान है, हल्की उदासी का पुट लिए मृदु "चख़ोवी" हास्य है और है ऐसे जीवन का स्वप्न, जो मानव के जीने योग्य हो, "अकलुष, सुंदर और काव्यमय" हो।

1.बेहूदे तौर-तरीक़े

दोगली नस्ल की छोटी सी सुर्खी कुतिया, जिसकी थूथनी बिल्कुल लोमड़ी जैसी थी, फुटपाथ पर आगे-पीछे दौड़ रही थी। कभी-कभी वह रुक जाती, रोते हुए ठंड से अकड़ा एक पंजा या दूसरा पंजा ऊपर उठाती और यह समझने की कोशिश करती कि आख़िर वह भटक कैसे गई।

उसे अच्छी तरह यह याद था कि उसने दिन कैसे बिताया और कैसे आख़िर में इस अन्जाने फुटपाथ पर आ पंहुची।

दिन यों शुरू हुआ कि उसके मालिक लुका अलेक्सान्द्रिच नाम के तरखान ने कनटोप पहना, लाल कपड़े में लपेट कर लकड़ी की कोई चीज बगल में दबाई और चिल्लाया:

"लाखी, चल !"

अपना नाम सुनकर दोगली कुतिया ठिये के नीचे से निकली, जहां वह छीलन पर सो रही थी, जिस्म तोड़ा और मालिक के पीछे हो ली। लुका अलेक्सान्द्रिच के ग्राहक बहुत ही दूर रहते थे, इसलिए उनके घर तक पंहुचने से पहले तरखान को कई बार भठियारखाने में जाना पड़ता था और बूंद-दो बूंद से गला तर करना पड़ता

था। लाखी को याद था कि रास्ते में उसके तौर-तरीके खासे बेहूदा रहे थे। इस खुशी से कि मालिक उसे घुमाने ले जा रहा है, वह उछल-कूद रही थी, घोड़ा -ट्रामों के पीछे भौंकती हुई दौड़ती थी, अहातों में घुस जाती थी और दूसरे कुत्तों का पीछा करती थी। अक्सर वह तरखान की नज़रों से ओझल हो जाती। वह रुक जाता और गुस्से में उस पर चीखता-चिल्लाता। एक बार तो चेहरे पर ऐसा भाव लाकर कि मानो उसे खा ही जाएगा; उसने लाखी का लोमड़ी जैसा कान मुट्ठी में भरकर ऐंठा और एक-एक शब्द पर जोर देते हुए बोला:

"कमबख़्त ! तेरा... सत्या... नास... हो !"

ग्राहकों को सामान पंहुचाकर लुका अलेक्सान्द्रिच दो मिनट को बहन के घर गया, वहां चबैने के साथ कुछ पी; फिर जान-पहचान के एक जिल्दसाज़ के यहां गया, वहां से भठियारख़ाने में, भठियारख़ाने से एक और रिश्तेदार के यहां, वग़ैरह , वग़ैरह। संक्षेप में यह कि जब लाखी इस अन्जान फुटपाथ पर पंहुची तो शाम हो रही थी और तरखान नशे में धुत्त था। वह जोर-जोर से हाथ हिलाते हुए आंहे भर रहा था:

"पाप में जन्मा मां ने गरभ में मेरे ! ओह, हमारे पाप ! पाप ! अब चले जाते हैं सड़क पर , बत्तियां देख रहें हैं, मर जाएंगे, तो नरक की आग में जलेंगे।"

या फिर वह मस्ती में आ जाता, लाखी को अपने पास बुलाता और उसे कहता:

"अरे लाखी, तू तो बस एक जानवर है और कुछ नहीं। आदमी के सामने तो तू वैसे ही है, जैसे तरखान के सामने दो कौड़ी का बढ़ई।"

जब वह उससे यों बातें कर रहा था, तभी अचानक बैंड बजने लगा। लाखी ने सिर घुमाया और देखा कि सड़क पर सिपाहियों की एक टुकड़ी सीधी उसकी ओर बढ़ी आ रही है। लाखी बैंड-बाजे का शोर नहीं सह सकती थी, वह उसे झिझोड़ डालता था। लाखी बौखला उठी और किकियाने लगी। उसे यह देखकर बड़ी हैरानी हुई कि मालिक न तो डरा ही,न चीखा-चिल्लाया और भौंका ही, बल्कि मुंह फैलाकर मुस्कुराने लगा, तनकर खड़ा हो गया और पूरे पंजे से सल्यूट मारा। यह देखकर कि मालिक तो विरोध कर नहीं रहा, लाखी और भी जोर से रोने लगी, बदहवास हो गई और सड़क के दूसरी ओर भाग गई।

जब उसके होश ठिकाने आए, तो बैंड नहीं बज रहा था और सिपाही भी नहीं थे। वह सड़क पार करके उस जगह आयी जहां उसने मालिक को छोड़ा था, पर मालिक वहां था ही नहीं। वह आगे दौड़ी, फिर पीछे, एक बार फिर सड़क पार की, पर मालिक तो मानो जमीन में समा गया था। लाखी फुटपाथ सूंघने लगी, ताकि मालिक की गंध से पता लगा सके कि वह किधर गया, पर कोई कमबख़्त इससे पहले रबड़ के नये गैलोश' पहन* उधर से गुजर गया था और अब सारी भीनी महकें रबड़ की बू से दब गई थीं, सो लाखी को कुछ पता न चल पा रहा था।

लाखी आगे-पीछे दौड़ रही थी, पर मालिक नहीं मिल पा रहा था और उधर अंधेरा होता जा रहा था। सड़क के दोनों ओर बत्तियां जल गईं, घरों की खिड़कियों में भी रोशनी हो गई। हिम के बड़े-बड़े फाहे गिर रहे थे और उनसे सड़क, घोड़ों की पीठें और कोचवानों की टोपियां सभी कुछ सफ़ेद रंग में रंगा जा रहा था, हवा में अंधेरा जितना गहराता जा रहा था, चारों ओर की वस्तुएं, उतनी ही सफ़ेद होती जा रही थीं। लाखी के पास से, उसकी नजरों के सामने अंधेरा करते हुए, उसे ठुकराते हुए अनजान ग्राहक लगातार आ जा रहे थे। (लाखी सभी इन्सानों को दो बिल्कुल असमान हिस्सों में बांटती थी: एक थे मालिक और दूसरे ग्राहक। दोनों के बीच बहुत बड़ा अंतर था: मालिकों को उसे मारने-पीटने का हक था और ग्राहकों को वह खुद काटने का अधिकार रखती थी।) सारे ग्राहक कहीं जाने की जल्दी में थे और कोई उसकी ओर ध्यान नहीं दे रहा था।

जब बिल्कुल अंधेरा छा गया, तो लाखी हताश और भयभीत हो गई। वह किसी घर के दरवाजे से सटकर बैठ गई और जोर-जोर से रोने लगी। लुका अलेक्सान्द्रिच के साथ सारे दिन की इस "यात्रा" ने उसे थका डाला था, उसके कान और पंजे ठंड से अकड़ रहे थे और साथ ही उसे बड़े जोरों की भूख लगी थी। सारे दिन में सिर्फ दो बार उसके मुंह में कुछ गया था: जिल्दसाज के यहां उसने थोड़ी सी लेई खाई थी और एक भठियारखाने में उसे सलामी का छिलका मिल गया था – बस और कुछ नहीं। अगर वह इंसान होती तो शायद सोचती:

"नहीं, ऐसे जीना नामुमकिन है! इससे तो गोली मार लेना बेहतर है।"

** बारिश के दिनों में चमड़े के जूतों के ऊपर पहने जाने वाली रबड़ की जूतियां*

2. रहस्यमय अजनबी

पर वह कुछ नहीं सोच रही थी और बस रोती जा रही थी। जब हिम के फाहों से उसकी सारी पीठ और सिर ढक गये और वह निढाल होकर ऊंघने लगी, तभी दरवाजे की चिटकनी खुली, चरमराहट हुई और दरवाजा लाखी की बगल में आ गया। वह उछल कर खड़ी हो गई। खुले दरवाजे में से कोई आदमी निकला, जो ग्राहकों की श्रेणी का था। लाखी चिचियाई थी और उसके पैरों तले आ गई थी, इसलिए वह उसकी ओर ध्यान दिये बिना नहीं रह सकता था। वह लाखी पर झुका और पूछने लगा:

"अरे तू कहां से आई ? चोट लग गई क्या ? बेचारी कुतिया... अच्छा नाराज मत हो... मेरे से गलती हो गई।"

लाखी ने बरौनियों पर लटक रहे हिमकणों के पीछे से अजनबी की ओर देखा और अपने सामने एक नाटे से,

गोल-मटोल आदमी को पाया। उसकी दाढ़ी-मूंछे साफ मुंडी हुई थीं और चेहरा भरा हुआ था। सिर पर वह ऊंचा टोप पहने था और उसके ओवरकोट के बटन खुले थे। उंगलियों से उसकी पीठ पर गिरा हिम झाड़ते हुए वह कहता जा रहा था:

"अरे तू किकियाती क्यों है? तेरा मालिक कहां है ? लगता है तू खो गई ? बेचारी कुतिया ! अब हम क्या करें ?"

अजनबी की आवाज में अपनेपन और स्नेह का आभास पाकर लाखी ने उसका हाथ चाटा तथा और भी अधिक दयनीय स्वर में किकियाने लगी।

"है तो तू बड़ी प्यारी !" अजनबी ने कहा। "बिल्कुल लोमड़ी है ! ... अच्छा, तो क्या करें ? चल मेरे साथ ही चल शायद तू किसी काम आ जाए ...पुच-पुच !"

उसने लाखी को पुचकारा और हाथ से इशारा किया, जिसका सिर्फ एक मतलब हो सकता था: "चल ! " और लाखी चल दी।

यही कोई आधे घंटे बाद वह एक बड़े से कमरे में बैठी थी और सिर एक ओर को झुकाए कौतूहल के साथ अजनबी को देख रही थी, जो मेज पर खाना खा रहा था। खाना खाते हुए वह लाखी की ओर भी कुछ टुकड़े फेंकता जा रहा था... पहले उसने उसे रोटी दी और पनीर का हरा छिलका दिया, फिर गोश्त की बोटी, आधा समोसा, मुर्गी की हड्डियां। लाखी भूख के मारे यह सब इतनी जल्दी खा गई कि स्वाद का उसे पता ही नहीं चला। जितना ज्यादा वह खाती जा रही थी, उतनी ही उसकी भूख तेज हो रही थी।

उसे इस तरह टूट-टूट कर खाते देखकर अजनबी कह रहा था: "ओह, तेरे मालिक तुझे खाना नहीं देते लगते ! निरा हड्डियों का पुतला है तू।"

लाखी ने बहुत खा लिया था। पर उसका पेट नहीं भरा था, बस खाने का खुमार चढ़ गया था। खाने के बाद वह कमरे के बीचोंबीच टांगे फैलाकर लेट गई। उसके सारे शरीर में मीठी कसक सी हो रही थी। वह दुम हिलाने लगी। उधर उसका नया मालिक आरामकुर्सी में बैठा सिगार पी रहा था और इधर वह दुम हिलाते हुए यह मसला हल कर रही थी कि कहां रहना बेहतर है – अजनबी के यहां या तरखान के घर ? अजनबी के घर में कोई खास चीज नहीं है, आराम कुर्सियों, सोफे, लैम्प और कालीनों के अलावा उसके कमरे में कुछ भी नहीं है, कमरा खाली-खाली लगता है, तरखान का सारा घर चीजों से भरा हुआ है: उसके पास मेज है, ठिया है, छीलन का ढेर है, रंदे, रुखानियां, आरियां हैं, पिंजड़े में चिड़िया है और लकड़ी का छोटा सा टब है... अजनबी के घर में किसी चीज की गंध नहीं आती, तरखान के घर में सदा धूल छायी रहती है और सरेस, वार्निश और छीलनों की बढ़िया गंध आती है। पर अजनबी के यहां एक बहुत अच्छी बात है – वह खाने को बहुत कुछ देता है और इन्साफ़ से यह भी कहना चाहिए कि जब लाखी उसके सामने मेज तले बैठी थी और गदगद सी उसकी ओर देख रही थी, तो उसने एक बार भी उसे ठोकर नहीं मारी, पैर नहीं पटके और एक बार भी नहीं चिल्लाया: "धुत ! कमबख़्त कहीं की !"

सिगार पीकर नया मालिक बाहर गया और दो मिनट में ही छोटा सा गद्दा उठाए लौट आया।

"ऐ, कुतिया, इधर आ," सोफे के पास कोने में गद्दा रखते हुए उसने कहा। "लेट जा यहां। सो जा !"

फिर उसने लैम्प बुझा दिया और बाहर चला गया। लाखी ने गद्दे पर लेटकर आंखे मूंद लीं। बाहर से कुत्तों के भौंकने की आवाज आई, वह भी जवाब में भौंकना चाहती थी, पर अचानक उसके मन पर गहरी उदासी छा गई। उसे लुका अलेक्सान्द्रिच और उसके बेटे फ़ेद्युश्का की, ठिये तले आरामदेह जगह की याद हो आई... उसे याद आया कि जाड़ों की लंबी शामों में, जब तरखान रंदा चला रहा होता था या ऊंचे-ऊंचे अखबार पढ़ता था तो फ़ेद्युश्का अक्सर उसंके साथ खेला करता था... वह उसकी पिछली टांगें पकड़कर उसे ठिये के नीचे से निकाल लेता और ऐसे-ऐसे तमाशे करता कि लाखी की आंखो के आगे तितरियां नाचने लगतीं और सारे जोड़ दुखते। वह उसे पिछले पैरों पर चलाता, उसकी घंटी बनाता, यानी उसकी दुम पकड़कर ज़ोर-ज़ोर से हिलाता, जिससे लाखी चीखती और भौंकती; वह उसे तंबाकू सुंघाता... सबसे दर्दनाक यह खेल था: फ़ेद्युश्का गोश्त की बोटी को धागे में बांध देता और लाखी को देता, जब लाखी बोटी निगल जाती, तो वह ठहाके मारता हुआ उसके पेट में से बोटी निकाल लेता। यादें जितनी तीखी होती जा रही थीं, उतने ही उदास स्वर में वह जोर-जोर से किकिया रही थी।

परंतु शीघ्र ही उसकी उदासी पर थकावट और गर्माहट छा गई ... लाखी को नींद आने लगी। उसकी कल्पना में कुत्ते दौड़ने लगे; वह झबरीला कुत्ता भी उनमें था, जिसे आज उसने सड़क पर देखा था, उसकी आंख पर सफ़ेद दाग़ था, और नाक के पास बालों के गुच्छे। फ़ेद्युश्का हाथ में रुखानी उठाए उस कुत्ते का पीछा करने लगा। सहसा उसके बदन पर भी झबरीले बाल उग आए, वह खुशी-खुशी भौंकने लगा और लाखी के पास आ पंहुचा। उन दोनों ने बड़े प्रेम से एक दूसरे की नाक सूंघी और बाहर सड़क पर दौड़ गए...

3.नई और बड़ी अच्छी जान-पहचान

लाखी जब जागी तो उजाला हो चुका था और बाहर से ऐसा शोर आ रहा था, जैसा केवल दिन के समय होता है। कमरे में कोई भी न था। लाखी ने जिस्म तोड़ा, जम्हाई ली और उखड़ी-उखड़ी सी कमरे का चक्कर लगाने लगी। उसने सारे कोने और फर्नीचर सूंघा, ड्योढ़ी में झांककर देखा पर वहां कोई दिलचस्प चीज न मिली। ड्योढ़ी के दरवाजे के अलावा कमरे में एक और दरवाजा भी था। कुछ देर सोचने के बाद लाखी ने दोनों पंजो से उसे खरोंचा, खोला और अगले कमरे में चली गई। यहां एक पलंग पर फ़्लेलिन का कंबल ओढ़े ग्राहक सो रहा था। वह पहचान गई कि यह कल वाला अजनबी ही है।

वह गुर्राने लगी, पर फिर कल का खाना याद करके दुम हिलाने और सूंघने लगी।

उसने अजनबी के कपड़े और बूट सूंघे और यह पाया कि उनसे घोड़े की तेज गंध आती है। इस कमरे में एक और दरवाजा था, वह भी भिड़ा हुआ था। लाखी ने उसे खरोंचा छाती से उस पर जोर डाला और खोल लिया। दरवाजा खुलते ही वहां से बड़ी अजीब सी गंध आई, जिससे लाखी एकदम चौकन्नी हो गई। उसे लग रहा था कि कोई अप्रिय घटना होगी। गुर्राते और इधर उधर झांकते हुए वह मैले दीवारी कागज वाले छोटे से कमरे में घुसी और डर के मारे फौरन पीछे हट गई। उसने एक बिल्कुल ही अप्रत्याशित और भयावह दृश्य देखा था। फर्श तक गर्दन और सिर झुकाए, पंख फैलाए एक हल्का सुरमई हंस फुफकारता हुआ सीधा उसकी ओर बढ़ता आ रहा था। एक ओर को गद्दे पर सफेद बिल्ला लेटा हुआ था। लाखी को देखकर वह उछला, उसने पीठ कमान की तरह तानी, दुम ऊंची कर ली, रोयें खड़े किए और वह भी फुफकारने लगा। कुतिया खासी डर गई, पर वह यह दिखाना नहीं चाहती थी, सो जोर से भौंकती हुई बिल्ले की ओर लपकी ... बिल्ले ने पीठ और भी ज्यादा तान ली, फुफकार भरी और पंजा लाखी के सिर पर मारा। लाखी झट से पीछे हट गई, चारों पैरों पर बैठ गई और जोर-जोर से चीखते हुए भौंकने लगी; तभी हंस ने पीछे से आकर अपनी चोंच उसकी पीठ पर दे मारी। लाखी उछली और हंस पर झपटी...

"क्या हो रहा है यह?" गुस्से भरी जोरदार आवाज आई और गाउन पहने, दांतों में सिगार दबाए अजनबी कमरे में आ गया। "क्या है यह सब? चलो अपनी-अपनी जगह।"

बिल्ले के पास आकर उसने एक ठोंगा मारा और कहा: "लेट जा, मुए!"

हंस की ओर मुड़कर वह चिल्लाया:

"इवान इवानिच, चलो अपनी जगह!"

बिल्ले ने चुपके से अपने गद्दे पर लेटकर आंखे मूंद लीं। उसकी थूथनी और मूंछो के भाव से लग रहा था कि वह खुद भी इस बात पर खुश नहीं है कि ताव में आकर

लड़ने लगा। लाखी रोनी सी होकर किकियाने लगी, हंस ने अपनी गर्दन तान ली और जल्दी-जल्दी कुछ बोलने लगा। वह बड़े जोश से और साफ-साफ कुछ कह रहा था, पर बिल्कुल कुछ भी समझ में न आता था।

"अच्छा, अच्छा ! " मालिक ने जम्हाई लेते हुए कहा। "मिल-जुल कर रहना चाहिये।" उसने लाखी को सहलाया और बोलता गया: "तू डर नहीं... यहां सब अच्छे हैं, कोई तुझे कुछ नहीं कहेगा। ठहर , तुझे हम पुकारेंगे कैसे? नाम के बिना तो काम नहीं चल सकता। "

अजनबी थोड़ी देर सोचता रहा फिर बोला:

"हुं, तेरा नाम होगा... मौसी। समझी? मौसी!"

और कुछ बार "मौसी, मौसी" कहकर वह बाहर चला गया। लाखी बैठ गई और देखने लगी। बिल्ला जरा भी हिले-डुले बिना गद्दे पर बैठा हुआ था और सोने का बहाना कर रहा था। हंस गर्दन तानकर और एक ही जगह पर पैर बदलते हुए बड़े जोर-शोर से कुछ कहता जा रहा था। वह शायद बड़ा अक्लमंद हंस था; लंबा सा भाषण देकर वह शान से पीछे हट जाता और ऐसे देखता मानो खुद ही अपने भाषण पर मुग्ध हो रहा हो... उसकी बातें सुनकर और गुर्राहट से उसका जवाब देकर लाखी सारे कोने सूंघने लगी। एक कोने में छोटा सा टब रखा था, जिसमें उसे भीगे हुए मटर के दाने और रोटी के टुकड़े दिखे। उसने मटर चखा – अच्छा नहीं लगा, गीली रोटी के टुकड़े चखे -- और खाने लगी। हंस ने इस बात का जरा भी बुरा नहीं माना कि अनजान कुतिया उसका खाना खा रही है, उल्टे वह और भी जोर-शोर से बोलने लगा और अपना विश्वास दिखाने के लिए खुद भी वहां चला आया और मटर के कुछ दाने खा लिए।

4.अजूबे ही अजूबे

थोड़ी देर बाद अजनबी फिर आया और अपने साथ एक अजीब सी चीज लाया, जो दर जैसी थी। लकड़ी के जैसे-तैसे बने इस दर की आड़ी डंडी पर एक घंटी लटक रही थी और पिस्तौल बंधी हुई थी; घंटी की लटकन और पिस्तौल की लिबलिबी से डोरी बंधी हुई थी।अजनबी ने इस दर को कमरे के बीचोंबीच रख दिया, बड़ी देर तक कुछ खोलता, बांधता रहा, फिर हंस की ओर देखकर बोला:

"इवान इवानिच, आइए !"

हंस उसके पास गया और प्रतीक्षा की मुद्रा में खड़ा हो गया।

"अच्छा, जी," अजनबी बोला, "तो शुरू करते हैं। सबसे पहले झुककर आदाब बजाओ। जल्दी से ! "

इवान इवानिच ने गर्दन तानी, चारों ओर सिर झुकाने लगा और पंजा पीछे उठा लिया।

"शाबाश... अब ढेर हो जाओ ! "

हंस पीठ के बल लेट गया और पंजे ऊपर उठा लिए। कुछ और ऐसे ही मामूली तमाशों के बाद अजनबी ने सहसा अपना सिर पकड़ लिया, चेहरे पर, डर का भाव ले आया और चिल्लाया:

"आग ! आग ! बचाओ !"

इवान इवानिच दौड़ा-दौड़ा दर के पास गया, डोरी चोंच में पकड़ी और घंटी बजाने लगा।

अजनबी बहुत खुश हुआ। उसने हंस की गर्दन सहलाई और बोला:

"शाबाश, इवान इवानिच ! अच्छा, तुम यह कल्पना करो कि तुम जौहरी हो और हीरे-जवाहरात बेचते हो। अब यह कल्पना करो कि तुम दुकान पर आए और देखा वहां चोर घुस आए हैं। ऐसी हालत में तुम क्या करोगे?"

हंस ने दूसरी डोरी चोंच में पकड़ी और खींच दी, तभी जोरदार धमाका हुआ। लाखी को घंटी की आवाज बड़ी अच्छी लगी थी और धमाके से तो वह बावली हो उठी, दर के चारों ओर दौड़ने और भौंकने लगी।

"मौसी, चलो अपनी जगह ! " अजनबी चिल्लाया। "चुप रहो ! "

इवान इवानिच का काम इस धमाके के साथ ही खत्म नहीं हुआ। इसके बाद घंटे भर तक अजनबी उसे अपने इर्द-गिर्द बागडोर पर दौड़ाता रहा और कोड़ा सटकारता रहा। हंस को दौड़ते हुए बाधाओं के ऊपर से और छल्ले में से कूदना पड़ता था, सीख़पा होना पड़ता था, यानी दुम पर बैठकर पंजे हवा में हिलाने पड़ते थे। लाखी टकटकी लगाए इवान इवानिच को देख रही थी, वह खुशी से भौंकने लगती और उसके पीछे दौड़ने लगती। आखिर हंस को भी और खुद को भी थकाकर अजनबी ने माथे से पसीना पोंछा और आवाज दी:

"मार्या, ज़रा ख़न्नोन्या इवानव्ना को बुलाओ इधर ! "

थोड़ी देर में घुरघुराहट सुनायी दी... लाखी गुर्राने लगी, बड़ी बहादुर सी बन गई, पर फिर भी अजनबी के पास आ गई। दरवाजा खुला, किसी बुढ़िया ने अंदर झांक कर देखा और कुछ कहकर एक काले से, बहुत ही
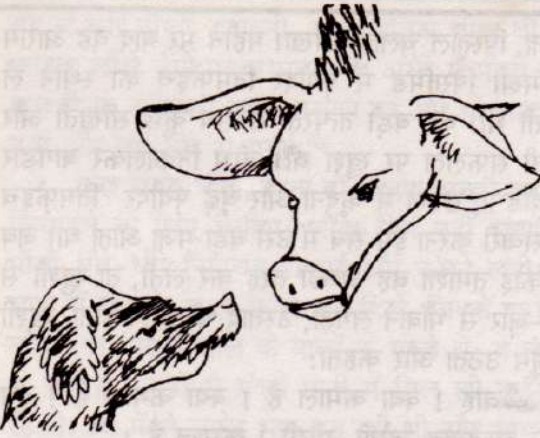
बदसूरत सूअर को अंदर घुसेड़ दिया। लाखी की गुर्राहट की जरा भी परवाह न करते हुए सूअर ने अपना थूथना ऊपर उठाया। लगता था कि वह अपने मालिक, बिल्ले और इवान इवानिच को देखकर बड़ा खुश है। उसने बिल्ले के पास आकर अपना थूथना उसके पेट में लगाया, फिर हंस से कुछ बातें करने लगा। यह सब वह जिस तरह कर रहा था और जैसे अपनी दुम हिला रहा था, उससे लगता था कि वह नेक स्वभाव का है। लाखी ने तुरंत ही भांप लिया कि ऐसों पर गुर्राना और भौंकना बेकार है।

मालिक ने दर हटाया और चिल्लाया:

"फ्योदर तिमफ़ेइच, पधारिए ! "

बिल्ला उठा, अलसाहट के साथ जिस्म तोड़ा और अनमना सा, मानो अहसान करता हुआ सूअर के पास आ गया।

"तो चलो, मिस्री पिरामिड से शुरू करें," मालिक बोला।

वह बड़ी देर तक कुछ समझाता रहा, फिर बोला: "एक... दो... तीन... " उसके तीन कहते ही इवान इवानिच ने पंख फड़फड़ाए और सूअर की पीठ पर जा सवार हुआ... जब वह पंखो और गर्दन से संतुलन करता हुआ सूअर के कड़े बालों वाली पीठ पर टिक गया, तब फ्योदर तिमफ़ेइच सुस्ताया हुआ सा, यह दिखाते हुए कि उसे इस सब तमाशे से कुछ नहीं लेना-देना है, कि यह सब बेकार की बातें हैं, सूअर की पीठ पर चढ़ गया, फिर अनिच्छा से हंस पर जा चढ़ा और पिछली टांगो पर खड़ा हो गया। इसे ही अजनबी मिस्री पिरामिड कहता था। लाखी बेहद खुश हो उठी, किकियाई, पर तभी बिल्ले ने जम्हाई ली और संतुलन खो बैठने से वह हंस की पीठ से गिर गया। इवान इवानिच भी डगमगाया और गिर पड़ा। अजनबी चिल्लाने और हाथ झटकने लगा, फिर से कुछ समझाने लगा। घंटे भर तक पिरामिड बनाते रहने के बाद अथक मालिक इवान इवानिच को बिल्ले की सवारी करना सिखाने लगा, फिर बिल्ले को सिगार पीना, इत्यादि।

आखिर अजनबी ने माथे से पसीना पोंछा और बाहर निकल गया। और इस तरह यह पाठ खत्म हुआ। फ्योदर तिमफ़ेइच ने घिन के साथ फुफकार भरी, गद्दे पर लेट गया और आंखे मूंद लीं। इवान इवानिच टब की ओर चल दिया और सूअर को बुढ़िया ले गई। अनगिनत नई छापों के कारण दिन बीतते पता भी न चला। शाम को लाखी का गद्दा मैले दीवारी कागज वाले कमरे में रख दिया गया और रात उसने फ्योदर तिमफ़ेइच तथा हंस के साथ काटी।

5. वाह ! क्या कमाल है !

एक महीना बीत गया।

लाखी इस बात की आदी हो गई थी कि रोज शाम को उसे मज़ेदार खाना मिलता था और मौसी कहकर पुकारा जाता था। अजनबी और नए साथियों की भी वह आदी हो गई थी। जिंदगी बड़े मज़े से बीत रही थी।

सभी दिन एक ही तरह से शुरू होते थे। आम तौर पर इवान इवानिच सबसे पहले जागता था। वह तुरंत ही मौसी या बिल्ले के पास जाता, गर्दन तानकर बड़े जोर-शोर से कुछ कहने लगता, पर पहले की भांति उसकी कोई बात समझ में न आती। कभी-कभी वह अपनी लंबी गर्दन ऊपर उठाकर एक लंबे एकालाप करता। पहले कुछ दिन तक तो लाखी यह सोचती रही कि वह बहुत अक्लमंद है, इसलिए इतना बोलता है, पर थोड़े दिन बीतने पर उसके मन में हंस के लिए कोई आदर न रहा। अब जब वह अपना लंबा भाषण झाड़ता हुआ उसके पास आता, तो वह दुम नहीं हिलाती थी, बल्कि उसके साथ निरे बक्की जैसा ही बर्ताव करती थी, जो सबको तंग करता है, सोने नहीं देता। उसका कोई लिहाज किए बिना वह गुर्रा कर उसे झाड़ देती थी।

जनाब फ्योदर तिमफ़ेइच के तौर-तरीके बिल्कुल ही और थे। वह सुबह जागने पर कोई आवाज़ नहीं करता था, हिलता-डुलता भी नहीं था और न आंखे ही खोलता था। वह तो बड़ी खुशी से जागता ही न, क्योंकि साफ़ लगता था कि उसे इस जिंदगी से कोई लगाव ही नहीं है। किसी बात में उसकी दिलचस्पी न थी, हर चीज वह लापरवाही और आलस्य से देखता था, किसी की उसे कोई परवाह न थी, यहां तक कि अपना स्वादिष्ट खाना खाते हुए भी

वह घिन से फुफकारता रहता था। लाखी सुबह उठकर कमरों का चक्कर काटने और कोने सूंघने लगती। सिर्फ उसे और बिल्ले को सारे घर में घूमने की इजाजत थी। इवान इवानिच को मैले दीवारी कागज़ वाले कमरे की दहलीज़ लांघने का हक़ नहीं था और सूअर अहाते में किसी कोठरी में रहता था, केवल पाठ के समय अंदर आता था। मालिक देर से उठता था। जी भर के चाय पीने के बाद वह तुरंत ही अपने तमाशों में लग जाता। रोज़ाना कमरे में दर, कोड़ा और छल्ले लाये जाते और रोजाना प्राय: वही सब दोहराया जाता। पाठ तीन-चार घंटे चलता। कभी-कभी तो इसके बाद फ्योदर तिमफ़ेइच यों लड़खड़ाता, जैसे कि नशे में हो , इवान इवानिच अपनी चोंच खोलकर हांफता, मालिक का चेहरा लाल सुर्ख हो जाता और उसके माथे से पसीना पोंछे न पोंछा जाता। इन पाठों और खाने की बदौलत दिन तो बड़े रोचक रहते, पर शाम को लाखी ऊबती रहती। आम तौर पर शाम को मालिक हंस और बिल्ले को लेकर चला जाता था। अकेली रह जाने पर मौसी अपने गद्दे पर लेट जाती और उदास हाने लगती.. उस पर अनजाने ही धीरे-धीरे उदासी छा जाती थी, जैसे कमरे में अंधेरा छा जाता है। इसकी शुरुआत यों होती कि कुतिया का न भौंकने, न कुछ खाने या कमरों में दौड़ने का और यहां तक कि देखने तक को मन न करता। फिर उसकी कल्पना में दो अस्पष्ट सी आकृतियां प्रकट होतीं, न जाने वे कुत्ते होते या लोग, प्यारे से, अनबूझ चेहरे, उनके प्रकट होते ही मौसी दुम हिलाने लगती और उसे लगता कि उसने उन्हे कहीं देखा है, कि वह उन्हे प्यार करती थी... नींद आने लगती, तो उसे लगता कि इन आकृतियों से सरेस, छीलन और वार्निश की गंध आती है।

जब वह नए जीवन की बिल्कुल आदी हो गई और मरियल सी लंगी के बजाय ऐसी माटी-तगड़ी कुतिया बन गई, जिसकी अच्छी तरह देखभाल होती है, तो पाठ से पहले एक दिन मालिक ने उसे सहलाया और बोला:

"मौसी, अब कुछ काम करना चाहिए। बहुत निठल्ली बैठ लीं तुम। मैं तुम्हे कलाकार बनाना चाहता हूं... बनोगी कलाकार ?"

और वह उसे कई चीजें सिखाने लगा। पहले पाठ में उसने पिछली टांगों पर खड़े होना और चलना सीखा। मौसी को यह बहुत अच्छा लगा। दूसरे पाठ में उसे पिछले पंजो पर कूदकर मालिक के हाथ से चीनी की डली लेनी थी, जो वह उसके सिर के काफ़ी ऊपर हाथ में पकड़े हुए था। फिर अगले पाठों में उसने नाचना, बागडोर पर दौड़ना, पिस्तौल चलाना सीखा। महीने भर बाद वह आराम से मिस्री पिरामिड में फ्योदर तिमफ़ेइच का स्थान ले सकती थी। वह बड़ी तत्परता से सब कुछ सीखती और अपनी सफलता पर खुश थी। जीभ निकालकर बागडोर पर दौड़ना, छल्ले में कूदना और बूढ़े फ्योदर तिमफ़ेइच की सवारी करना इस सब में उसे बड़ा मजा आता था। जब भी कोई तमाशा वह अच्छी तरह कर लेती, तो खुशी से ज़ोर-ज़ोर से भौंकने लगती, उस्ताद भी हैरान होता, खुशी से झूम उठता और कहता:

"वाह ! क्या कमाल है ! क्या कमाल है ! तुम ज़रूर लाजवाब रहोगी, मौसी ! कमाल है ! "

मौसी "कमाल" शब्द की भी इतनी आदी हो गई कि हर बार जब मालिक यह शब्द कहता, तो वह उछलकर खड़ी हो जाती, इधर-उधर देखती, मानो यह उसका नाम हो।

6. बेचैनी भरी रात

मौसी ने कुत्तों का सपना देखा कि जमादार लम्बे डंडे वाला झाड़ू लिए उसका पीछा कर रहा है और डर के मारे उसकी आंख खुल गई।

अंधेरे कमरे में सन्नाटा था और बहुत उमस थी। पिस्सू काट रहे थे। मौसी को पहले कभी भी अंधेरे से डर नहीं लगा था, अब न जाने क्यों वह भयभीत हो उठी थी और भौंकने का मन हो रहा था। पास के कमरे में मालिक ने जोर की उसांस भरी, फिर थोड़ी देर बाद सूअर अपनी कोठरी में घुरघुराया और फिर से सन्नाटा छा गया। खाने की बात सोचो, तो मन को चैन मिलता है, सो मौसी यह सोचने लगी कि कैसे उसने आज फ्योदर तिमफ़ेइच के खाने में से मुर्गी की टांग चुरा ली थी और बैठक में अल्मारी और दीवार के बीच छिपा दी थी, जहां ढेर सारी धूल और मकड़ी का जाला है। अच्छा हो, जाकर देख आए: वह टांग सही-सलामत है कि नहीं ? हो सकता है, मालिक को वह मिल गई हो और वह उसे खा गया हो। पर सुबह होने से पहले वह कमरे से बाहर नहीं निकल सकती – ऐसा यहां का नियम है। मौसी ने आंखे मूंद लीं, जितनी जल्दी सो जाओ, उतनी ही जल्दी सुबह हो जाती है। पर अचानक उससे थोड़ी ही दूर कहीं अजीब सी चीख हुई, जिससे वह कांप उठी और चारों पैरों पर खड़ी हो गई। यह इवान इवानिच चीखा था, पर उसकी चीख हमेशा की तरह बक्की की विश्वास भरी चीख नहीं थी,

यह तो कोई तीखीं, डरावनी, अस्वाभाविक चीख थी, जैसे फाटक खोले जाने पर चरमराता है। अंधेरे में मौसी को न कुछ दिखा, न समझ आया, उसका डर और भी ज्यादा बढ़ गया और वह धीरे से गुर्राई।

कुछ समय बीता, इतना ही जितना अच्छी हड्डी को चिचोड़ने के लिए चाहिए; चीख़ फिर नहीं सुनाई दी। मौसी धीरे-धीरे निश्चिंत हो गई और ऊंघने लगी। उसे सपने में दो बड़े, काले-काले कुत्ते दिखे, जिनके पुट्ठों और बगलों पर पिछले साल के बालों के गुच्छे थे; वे लकड़ी के बड़े से टब में से गंदले पानी में मिल ली जूठन खा रहे थे। टब में से सफेद भाप उठ रही थी और जायकेदार गंध आ रही थी; कभी-कभी कुत्ते मुड़कर उसकी ओर देखते, खींसे निपोड़ते और गुर्राते : "तुझे तो नहीं देंगे ! " पर घर में से भेड़ की खाल का ओवरकोट पहने जमादार निकला और उसने चाबुक से उन्हे भगा दिया; तब मौसी टब के पास गई और खाने लगी, पर जैसे ही जमादार फाटक से बाहर गया, दोनों काले कुत्ते गुर्राते हुए उस पर टूट पड़े, अचानक फिर तीखी चीख़ सुनाई दी।

"कैं-कैं-कैं !" इवान इवानिच चिल्लाया।

मौसी जाग गई, उछली और गद्दे पर खड़ी-खड़ी ही हूकने लगे। उसे लग रहा था कि यह इवान इवानिच नहीं कोई दूसरा, बाहर का कोई चिल्ला रहा है। कोठरी में भी सूअर फिर से घुरघुराया।

जूतों के घिसटने की आवाज सुनाई दी और गाउन पहने, हाथ में मोमबत्ती पकड़े मालिक अंदर आया।

टिमटिमाती रोशनी मैले दीवारी कागज़ और छत पर नाचने लगी और उसने अंधेरे को भगा दिया। मौसी ने देखा कि कमरे में कोई बेगाना नहीं है। इवान इवानिच फ़र्श पर बैठा था, सो नहीं रहा था। उसके पंख फैले हुए थे और चोंच खुली थी, उसकी शक्ल-सूरत से लगता था मानो वह बहुत थक गया हो और उसे प्यास लगी हो। बूढ़ा प्योदर तिमफ़ेइच भी नहीं सो रहा था। हो न हो, वह भी चीख से जाग गया होगा।

"इवान इवानिच, क्या हुआ तुम्हे?" मालिक ने हंस से पूछा। "क्यों चीख रहे हो? बीमार हो क्या?"

हंस चुप था। मालिक ने उसकी गर्दन और पीठ सहलाई और बोला:

"कैसा सनकी है भई तू। खुद भी नहीं सो रहा, दूसरों को भी नहीं सोने देता।

मालिक चला गया, अपने साथ रोशनी ले गया, और फिर से अंधेरा घिर आया। मौसी को डर लग रहा था। हंस चीख नहीं रहा था, पर उसे फिर यह लगने लगा कि अंधेरे में कोई बेगाना खड़ा है। सबसे डरावनी बात तो यह थी कि इस बेगाने को काटा नहीं जा सकता था, क्योंकि वह अदृश्य था और उसकी कोई आकृति न थी। न जाने उसे क्यों यह ख्याल आ रहा था कि आज रात को जरूर कोई बुरी बात होगी। प्योदर तिमफ़ेइच भी शांत नहीं था। मौसी को सुनाई दे रहा था कि कैसे वह अपने गद्दे पर करवटें बदल रहा है, जम्हाइयां ले रहा है और सिर झटक रहा है।

बाहर कहीं किसी ने फाटक खटखटाया और कोठरी में सूअर घुरघुराया। मौसी किकियाने लगी, अगली टांगें सामने बढ़ा दीं और उनपर सिर रख लिया। फाटक पर हुई खटखट, न जाने क्यों सो न रहे सूअर की घुरघुराहट, यह अंधेरा और सन्नाटा – इस सबमें उसे वैसा ही कुछ उदासी भरा और भयावह लग रहा था, जैसे इवान इवानिच की चीख में था। सब कुछ बेचैन, परेशान था। क्यों? कौन है यह बेगाना, जो दिखाई नहीं देता? मौसी के पास क्षण भर को दो धूमिल सी, हरी-हरी चिंगारियां चमकीं। उनकी सारी जान-पहचान के दौरान पहली बार प्योदर तिमफ़ेइच मौसी के पास आ बैठा था। उसे क्या चाहिए? मौसी ने उसका पंजा चाटा और यह पूछे बिना कि वह क्यों आया है, हौले से, तरह-तरह की आवाज़ निकालते हुए हूकने लगी।

"कैं-कैं !" इवान इवानिच चीख़ा। "कैं-कैं !"

फिर से दरवाजा खुला और मोमबत्ती लिए मालिक अंदर आया। हंस पहले जैसी मुद्रा में ही चोंच खोले, पंख फैलाये बैठा था। उसकी आंखे बंद थीं।

"इवान इवानिच !" मालिक ने आवाज दी।

हंस हिला-डुला नहीं। मालिक उसके सामने फर्श पर बैठ गया, पल भर चुपचाप देखता रहा और बोला:

"इवान इवानिच ! क्या हुआ? मर रहा है तू क्या? ओह, अब मुझे याद आया," उसने अपना सिर पकड़

लिया। "मुझे पता है, यह सब क्यों हो रहा है। आज तू घोड़े के पैर तले आ गया था न, इसीलिए ! हे भगवान ! हे भगवान !"

मौसी की समझ में नहीं आ रहा था कि मालिक क्या कर रहा है। पर उसके चेहरे से वह देख रही थी कि उसे किसी बहुत ही बुरी बात होने की आशंका है। उसने अंधेरी खिड़की की ओर थूथनी बढ़ाई। उसे लग रहा था कि उसमें से कोई बेगाना झांक रहा है, और वह हूकने लगी।

"वह मर रहा है, मौसी !" मालिक ने कहा और हाथ ऊपर को उठाकर झटके। "हां, हां मर रहा है। तुम्हारे कमरे में मौत आ गयी है। क्या करें हम?"

मालिक का चेहरा पीला पड़ गया था। वह घबराया हुआ था। गहरी सांसे भरते और सिर हिलाते हुए वह अपने सोने के कमरे में चला गया। मौसी को अंधेरे में रहते डर लग रहा था, सो वह भी उसके पीछे चल दी। पलंग पर बैठकर मालिक ने कई बार कहा:

"हे भगवान, क्या करें?"

मौसी उसके पैरों के पास चक्कर काट रही थी। उसे कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि उसका मन इतना उदास क्यों है, क्यों सब इतने परेशान हो रहे हैं। यह सब समझने की कोशिश में वह मालिक की हरकत को ग़ौर से देख रही थी। फ्योदर तिमफ़ेइच विरले ही कभी अपना गद्दा छोड़ता था। अब वह मालिक के कमरे में आ गया और उसके पैरों के पास लोटने लगा। वह रह-रह कर यों सिर झटकता,मानो उसमें से कोई बुरा विचार निकाल डालना चाहता हो, और पलंग के नीचे यों झांक रहा था जैसे कि वहां कुछ हो। मालिक ने रकाबी ली, कमरे में लगे हाथ धोने के छोटे से ड्रम में से पानी उसमें डाला और फिर से हंस के पास गया।

"इवान इवानिच, लो, पी लो," उसके कमरे में रकाबी रखते हुए उसने लाड़ से कहा। "पी ले, भैया।"

पर इवान इवानिच हिल-डुल नहीं रहा था और न ही आंखे खोल रहा था। मालिक ने उसका सिर रकाबी पर झुकाया और चोंच पानी में डाली, पर हंस नहीं पी रहा था। उसने पंख और भी फैला दिए और उसका सिर रकाबी पर रखा रह गया।

"नहीं अब कुछ नहीं किया जा सकता !" मालिक ने उसांस ली। "सब खत्म हो गया। गया इवान इवानिच !"

और उसके गालों पर चमकीली बूंदें नीचे ढरकने लगीं, वैसी ही बूंदें, जैसी बारिश के समय खिड़कियों पर होती है। मौसी और फ्योदर तिमफ़ेइच कुछ नहीं समझ पा रहे थे, मालिक से सटे जा रहे थे और भयभीत से हंस को देख रहे थे।

"बेचारा इवान इवानिच !" ठंडी सांस भरते हुए मालिक कह रहा था। "मैं तो सोच रहा था कि बसंत में तुझे दाचा पर ले जाऊंगा और हरी-हरी घास पर तेरे साथ घूमूंगा। मेरे प्यारे जानवर, मेरे अच्छे साथी, तू अब नहीं रहा ! तेरे बिना मैं क्या करूंगा?

मौसी को लग रहा था कि उसके साथ भी ऐसा ही होगा, यानी वह भी ऐसे ही न जाने क्यों आंखे बंद कर लेगी, टांगे फैला देगी, मुंह खोल लेगी और सब भयभीत हो उसे देखेंगे। प्रत्यक्षत: फ्योदर तिमफ़ेइच के दिमाग़ में भी ऐसे ही विचार घूम रहे थे। बूढ़ा बिल्ला इससे पहले कभी भी इतना मायूस और निराश नजर नहीं आया था।

पौ फट रही थी। छोटे कमरे में अब वह अदृश्य बेगाना नहीं था, जिससे मौसी को इतना डर लग रहा था। जब बिल्कुल उजाला हो गया, तो जमादार आया, हंस के पंजे पकड़कर उसे कहीं ले गया। थोड़ी देर बाद बुढ़िया आई और टब ले गई।

मौसी बैठक में गई और अल्मारी के पीछे झांककर देखा: मालिक ने मुर्गी की टांग नहीं खाई थी, वह अपनी जगह पर ही, जाले और धूल में पड़ी हुई थी। पर मौसी का मन उखड़ा हुआ था, उसे रोना आ रहा था। उसने टांग को सूंघा भी नहीं, सोफ़े तले जाकर बैठ गई और पतली सी आवाज़ में किकियाने लगी।

7.और तमाशा फ़ेल हो गया

एक शाम को मालिक मैले दीवारी कागज वाले कमरे में आया और हाथ रगड़ते हुए बोला:

"अच्छा जी... "

वह और कुछ कहना चाहता था, पर कहे बिना ही बाहर चला गया। मौसी पाठों के दौरान उसके चेहरे और लहजे के उतार चढ़ाव को समझना सीख गई थी, सो वह जान गई कि वह उत्तेजित और चिंतित है, लगता है, गुस्से में भी है। थोड़ी देर बाद वह लौटा और बोला:

"आज मैं मौसी और फ्योदर तिमफ़ेइच को अपने साथ ले जाऊंगा। मिस्री पिरामिड में मौसी आज इवान इवानिच का स्थान लेगी। ओफ़, क्या है यह सब ! कुछ तैयार नहीं, सीखा नहीं गया, रिहर्सलें कम हुई हैं ! बदनाम हो जाएंगे, तमाशा फ़ेल हो जाएगा !"

वह फिर से बाहर चला गया और मिनट भर बाद ही फ़र का ओवरकोट और ऊंचा टोप पहने लौट आया। बिल्ले के पास जाकर उसने अगली टांगों से उसे पकड़ा और उठाकर अपने ओवरकोट तले छाती पर चिपका लिया। फ्योदर तिमफ़ेइच इस सबसे बिल्कुल उदासीन लगता था, यहां तक कि उसने आंखे भी नहीं खोलीं। प्रत्यक्षत: उसके लिए सब बराबर था: वह लेटा रहे या उसे टांगें पकड़कर उठा लिया जाए, गद्दे पर लेटा रहे या मालिक की छाती पर ओवरकोट तले दुबका रहे।

"मौसी, चलो," मालिक ने कहा।

कुछ भी समझे बिना और दुम हिलाते हुए मौसी उसके पीछे चल दी। पल भर बाद ही वह स्लेज गाड़ी में मालिक के पावों में बैठी थी और सुन रही थी कि कैसे वह ठंड से सिकुड़ता हुआ और घबराता हुआ बुदबुदा रहा था:

"बदनाम हो जाएंगे ! तमाशा फ़ेल हो जाएगा !"

स्लेज गाड़ी एक बहुत बड़े, अजीब से मकान के पास रुकी, जो औंधे पडे डोंगे जैसा था। उसमें शीशे के तीन दरवाजे थे, जो दर्जन भर बत्तियों से जगमगा रहे थे। दरवाजे शोर करते हुए खुलते और मुंहों की तरह वहां आ-जा रहे लोगों को निगल जाते। यहां लोग बहुत थे, कई घोड़े आकर रुक रहे थे, पर कुत्ते कहीं नजर न आते थे।

मालिक ने मौसी को उठाया और ओवरकोट के नीचे घुसेड़ लिया, जहां फ्योदर तिमफ़ेइच पहले से ही बैठा हुआ था। वहां अंधेरा और उमस थी, पर गरमाहट भी। क्षण भर को दो धूमिल सी, हरी-हरी चिंगारियां चमकीं–कुतिया के ठंडे, सख्त पंजो से परेशान होकर बिल्ले ने आंखे खोली थीं। मौसी ने उसका कान चाटा, आराम से बैठने की फ़िक्र में वह कुलबुलाने लगी, बिल्ले को अपने ठंडे पंजो तले दबा दिया, अनजाने में सिर ओवरकोट के बाहर निकाल लिया, पर तुरंत ही गुर्राई और फिर अंदर घुस गई। उसे लगा उसने एक विशाल कमरा देखा है, जिसमें बहुत कम रोशनी है। कमरा अजीब-अजीब से भयानक जीवों से भरा हुआ था; कमरे के दोनों ओर बाड़ों-पिंजड़ों के पीछे से डरावने थूथने दिख रहे थे: घोड़ों के, सींगों वाले, लमकन्ने और एक बहुत ही बड़ा, मोटा थूथना, जिसपर नाक की जगह पूंछ थी और मुंह से दो चिचोड़ी हुई हड्डियां निकली हुई थीं।

बिल्ले ने मौसी तले फटी-फटी आवाज़ में म्याऊं की, पर तभी ओवरकोट खुल गया, मालिक ने कहा "हप !" और मौसी तथा फ्योदर तिमफ़ेइच नीचे कूद गए। वे अब एक छोटे से कमरे में थे, जिसकी मटमैली सी दीवारें लकड़ी के पटरों की बनी हुई थीं। यहां एक छोटी सी शीशे वाली मेज, एक स्टूल और कोनों में टंगे कपड़ों के अलावा और कुछ भी नहीं था। लैम्प या मोमबत्ती की जगह पंखेनुमा तेज बत्ती जल रही थी, जो दीवार में गड़ी एक नली पर लगी हुई थी। फ्योदर तिमफ़ेइच ने अपने रोयें चाटे, जो मौसी तले दब गए थे और जाकर स्टूल के नीचे लेट गया। अभी भी घबराते और हाथ रगड़ते हुए मालिक कपड़े उतारने लगा... उसने सिर्फ कोट या ओवर कोट ही नहीं उतारा, बल्कि इस तरह कपड़े उतारे जैसे कि वह घर

पर कम्बल तले लेटने से पहले उतारता था, यानी वह सिर्फ अंतरीय पहने रहा – पूरी बांहो की बनियान और तंग पायजामा। फिर वह स्टूल पर बैठ गया और शीशे में देखते हुए अपने आप को न जाने क्या-क्या करने लगा – देखकर आश्चर्य होता था। सबसे पहले उसने सिर पर नकली बालों का बिग पहना, जिसके बीचोंबीच मांग थी और दोनों ओर बालों से सींग बने हुए थे, फिर उसने चेहरे पर सफेद सा कुछ पोत लिया और सफेद रंग के ऊपर भौंहें, मूंछे और लाली बनाई। इतने में ही उसके तमाशे खत्म नहीं हुए। चेहरे और गर्दन पर लीप-पोतकर वह बहुत ही अजीबोगरीब पोशाक पहनने लगा। मौसी ने पहले कभी भी न घर पर और न ही सड़क पर किसी को ऐसे कपड़े पहने देखा था। कल्पना कीजिए बोरे जैसी खुली पतलून की, जो बड़े-बड़े फूलोंवाले छींट के कपड़े की बनी हुई थी। ऐसा कपड़ा शहरों के आम घरों में पर्दों के लिए और फ़र्नीचर पर चढ़ाने के काम आता है। पतलून बगलों तक ऊंची थी; उसका एक पांयचा कत्थई छींट का था और दूसरा चमकीली पीली छींट का। पतलून में समाकर मालिक ने ऊपर से छींट का सिंघाड़ेदार कालर वाला कुर्ता पहना, जिसकी पीठ पर सुनहरा सितारा बना

हुआ था; अलग-अलग रंग के मोजे पहने और फिर हरी जूतियां।

मौसी तो चकाचौंध हो गई। सफेद मुंह वाली बोरे जैसी आकृति से मालिक की गंध आती थी, उसकी आवाज भी जानी-पहचानी, मालिक जैसी ही थी, मगर ऐसे क्षण भी आते जब मौसी के मन में संदेह उठने लगता। तब उसका जी होता इस भड़कीली आकृति से दूर भागे और भौंकने लगे। नई जगह, पंखेनुमा बत्ती, नई गंधें, मालिक के साथ हुआ कायाकल्प – इस सबसे उसके मन में अजीब सा डर समा रहा था और उसे लग रहा था कि जरूर उसका सामना किसी डरावने जीव से होगा, जैसे कि नाक की जगह दुम वाला मोटा थूथना। ऊपर से दीवार के पीछे दूर कहीं वह बैंड-बाजा बज रहा था, जिसे मौसी सह नहीं सकती थी और कभी-कभी अनबूझ दहाड़ भी सुनाई देती। बस फ्योदर तिमफ़ेइच को एकदम निश्चिंत पड़े देखकर ही उसका थोड़ा ढांढ़स बंध रहा था। वह मजे में स्टूल के नीचे लेटा ऊंघ रहा था, जब स्टूल हिलता तब भी वह आंखे नहीं खोलता था। सफेद वास्कट और लम्बा कोट पहने एक आदमी ने अंदर झांककर देखा और कहा:

"अभी मिस अराबेला जा रही हैं। उसके बाद आपकी बारी है।"

मालिक ने कोई जवाब नहीं दिया। उसने मेज के नीचे से बड़ा अटैची निकाला और बैठकर इंतजार करने लगा। उसके हाथों और होंठों से साफ लग रहा था कि वह घबरा रहा है, मौसी उसकी कांपती सांस सुन रही थी।

"मि. जार्ज, चलिए !" दरवाजे के पीछे से किसी ने आवाज दी।

मालिक उठा, छाती पर तीन बार सलीब का निशान बनाया, फिर स्टूल के नीचे से बिल्ले को निकाला और अटैची में घुसेड़ दिया।

"चलो, मौसी !" मालिक ने हौले से कहा।

मौसी कुछ नहीं समझी, मालिक के पास आ गई; उसने मौसी का सिर चूमा और उसे फ्योदर तिमफ़ेइच के पास रख दिया। और फिर अंधेरा छा गया... मौसी बिल्ले को दबा रही थी, अटैची को खरोंच रही थी, डर के मारे उसके मुंह से आवाज नहीं निकल रही थी, अटैची यों हिल रहा था, मानो लहरों पर उछल रहा हो...

"लो जी मैं आ गया !" मालिक जोर से चिल्लाया। "लो जी मैं आ गया !"

मौसी ने महसूस किया कि इस चीख़ के बाद अटैची किसी सख़्त चीज से टकराया और फिर उसका हिलना-डुलना बंद हो गया। ज़ोर से चिंघाड़ने की आवाज आयी: किसी को थपथपाया जा रहा था और यह कोई, शायद नाक की जगह दुम वाला थूथना इतनी जोर से चिंघाड़ रहा था कि अटैची का ताला खड़खड़ा उठा। चिंघाड़ के जवाब में मालिक बारीक,तीखी आवाज़ में हंसा; घर पर वह कभी भी ऐसे नहीं हंसता था।

"हा-हा-हा !" चिंघाड़ को दबाने की कोशिश करते हुए वह चिल्लाया।"साहेबान मेहरबान ! मैं सीधा स्टेशन से आ रहा हूं। मेरी नानी इस दुनिया से चलती बनी है और मेरे लिए यह एक बक्सा छोड़ गई है ! बड़ा भारी है, हो न हो सोने से भरा होगा... हा-हा-हा ! अभी देखते हैं कितने लाख हैं इसमें !"

अटैची का ताला चटका। मौसी की आंखे तेज रोशनी से चुंधिया गई; वह उछलकर अटैची से बाहर निकली, शोर-गुल से बौखला गई और बड़ी तेजी से मालिक के इर्द-गिर्द दौड़ने लगी, जोर-जोर से भौंकने लगी।

"धत् तेरे की !"मालिक चिल्लाया।"फ्योदर तिमफ़ेइच! मौसी! आ गए मेरे प्यारे रिश्तेदार ! भाड़ में जाओ तुम !"

वह पेट के बल रेत पर गिर गया, बिल्ले और मौसी को पकड़ लिया, उन्हे बाहों में भरने, गले लगाने लगा। जब वह उसे अपने आलिंगन में कस रहा था तो मौसी ने जल्दी से एक नजर उस दुनिया पर डाली, जहां किस्मत उसे ले आई थी। उसकी भव्यता पर वह आश्चर्यचकित और विमुग्ध हो गई, पल भर को स्तब्ध रह गई, फिर मालिक के हाथों से निकल भागी और इन छापों के तीव्र प्रभाव में लट्टू की तरह घूमने लगी। नई दुनिया विशाल थी और तेज प्रकाश से भरपूर; जिधर भी नजर डालो, फर्श से छत तक चेहरे ही चेहरे थे, चेहरे ही चेहरे बस और कुछ नहीं।

"मौसी, तशरीफ़ रखो !" मालिक चिल्लाया।

मौसी को याद था कि इसका क्या अर्थ है। वह तुरंत उछल कर कुर्सी पर चढ़कर बैठ गई। उसने मालिक की ओर देखा। उसकी आंखे सदा की तरह गम्भीर और स्नेह भरी थीं, किन्तु चेहरा और खास तौर पर मुंह और दांत चौड़ी, जड़ मुस्कान से विकृत थे। वह ठहाके मारकर हंस रहा था, उछल-कूद रहा था, कंधे बिचका रहा था और यह दिखा रहा था कि हजारों लोगों की उपस्थिति में उसे बड़ा मजा आ रहा है। मौसी ने उसके उल्लास पर विश्वास कर लिया, सहसा अपने रोम-रोम से उसे यह

आभास हुआ कि ये हजारों चेहरे उसे देख रहें हैं, उसने लोमड़ी जैसी अपनी थूथनी ऊपर उठाई और खुशी से किकियाने लगी।

"मौसी आप यहां बैठिये," मालिक ने कहा। "हम फ्योदर तिमफ़ेइच के साथ थोड़ा नाच लें। "

फ्योदर तिमफ़ेइच उदासीनता से इधर-उधर देखता हुआ इस प्रतीक्षा में खड़ा था कि कब उसे ये बेवकूफी भरी हरकतें करने को कहा जाएगा। वह अनमना सा, लापरवाही से नाच रहा था, उसकी गतियों, उसकी दुम और मूंछो से यह साफ दिख रहा था कि वह इस भीड़ और सारी रौनक को तुच्छ मानता था, मालिक और उसका अपना तमाशा उसके लिए छिछोरा था... अपने हिस्से का नाच नाचकर उसने जम्हाई ली और बैठ गया। मालिक बोला:

"हां, तो मौसी, चलो, हम पहले गाएंगे और फिर नाचेंगे। अच्छा?"

उसने जेब से बांसुरी निकाली और बजाने लगा। मौसी संगीत नहीं सह सकती थी, वह बेचैनी से कुलबुलाने लगी और हूकने लगी। चारों ओर से तालियों की गड़गड़ाहट और कोलाहल सुनाई दिया। मालिक ने झुककर सलाम किया और जब सब शांत हो गया तो फिर से बांसुरी बजाने लगा... बांसुरी बहुत ऊंची तान में बज रही थी, जब ऊपर कहीं दर्शकों में किसी ने आश्चर्य के साथ जोर से आह भरी।"

"बापू !" बाल स्वर चिल्लाया। "यह तो लाखी है!"

"लाखी है ही !" नशे से कांपते पुरुष स्वर ने हामी भरी।"हां, लाखी है ! फ़ेद्युश्का, खुदा की मार पड़े, यह तो लाखी ही है ! पुच-पुच-पुच !"

गैलरी में किसी ने सीटी बजाई, और दो स्वर, एक बच्चे का और एक पुरुष का जोर-जोर से पुकारने लगे:

"लाखी! लाखी"

मौसी ठिठक गई, उसने उधर देखा जिधर से चिल्लाने की आवाज आ रही थी। दो चेहरे: एक बालोंवाला, नशे में मुस्कराता हुआ और दूसरा – गोल-मटोल, लाल और सहमा सा – उसकी आंखो में वैसे ही चौंध गए जैसे पहले तेज प्रकाश चौंधा था।

उसे याद हो आया, वह कुर्सी से गिर पड़ी, रेत पर लोटने लगी फिर उठी और खुशी से किकियाती हुई इन चेहरों की ओर दौड़ चली। कर्णभेदी कोलाहल हुआ, जिसमें जोर-जोर की सीटियां और एक बच्चे की तीखी चीख़ साफ सुनाई दे रही थीं:

"लाखी! लाखी!"

मौसी ने उछलकर रिंग की मुंडेर पार की, फिर किसी के कंधे के ऊपर से होती हुए बाक्स में पहुंच गई; अगली कतार में पंहुचने के लिए ऊंची दीवार लांघनी चाहिए थी: मौसी कूदी, पर ऊपर तक न पंहुच पाई, दीवार पर फिसलने लगी। फिर वह एक हाथ से दूसरे हाथ में जाने लगी, कई हाथ, चेहरे चाटती हुई ऊपर ही ऊपर बढ़ती गई और आख़िर गैलरी में पंहुच गई।

आधे घंटे बाद लाखी सड़क पर उन लोगों के पीछे जा रही थी, जिनसे सरेस और वार्निश की गंध आ रही थी। लुका अलेक्सान्द्रिच लड़खड़ा रहा था, पर उसे इतना अनुभव था कि उसके पांव उसे अपने आप ही नाली से दूर-दूर लिए जा रहे थे।

"पाप के गरत में लोटा मेरे गरभ में ..." वह बड़बड़ा रहा था। "अरी लाखी, तू तो बस एक भूल है। आदमी के सामने तो तू वैसे ही है, जैसे तरखान के सामने दो कौड़ी का बढ़ई।"

उसके साथ-साथ फ़ेद्युश्का बाप का टोप पहने चल रहा था। लाखी उनकी पीठों को देख रही थी और उसे लग रहा था कि वह न जाने कब से उनके पीछे चल रही है और खुश हो रही है कि जीवन का क्रम पल भर को भी नहीं टूटा।

मैले दीवारी कागज वाला कमरा, हंस, फ्योदर तिमफ़ेइच, स्वादिष्ट खाना और सरकस – यह सब उसे याद आया, पर अब यह एक लंबा, उलझा-पुलझा सपना ही लग रहा था।

कविताएं

मुन्ना का प्यार

सुभद्रा कुमारी चौहान

मां, मुन्ना को तुम हम सबसे
क्यों ज्यादा करती हो प्यार?
हमें भेज देतीं पढ़ने को
उसका करतीं सदा दुलार।।
उसे लिये रहतीं गोदी में
पैरों हमें चलाती हो।
हमें अकेला छोड़ उसे तुम
अपने साथ सुलाती हो।।
उसके रोने पर तुम अपने
काम छोड़ कर आती हो।
किन्तु हमारे रोने पर तुम
कितनी डांट लगाती हो।।

मां, क्या मुन्ना ही बेटा है
हम क्या नहीं तुम्हारे हैं?
सच कह दो मां, उसी तरह क्या
तुम्हें नहीं हम प्यारे हैं?
तुम भी बेटे हो मुझको तो
सभी एक से प्यारे हो।
सभी ह्रदय के टुकड़े हो
सब मेरे राज दुलारे हो।।
किन्तु बड़े हो तुम्हें बोलना
बातें करना आता है।
इसीलिए यों बात-बात पर

कविताएं

रोना नहीं सुहाता है।।
रोना अच्छा नहीं तुम्हें यह
बहुत बार बतलाया है।
पर छोटे मुन्ना को बोलो
किसने यह सिखलाया है।।
मां मैंने तो छोटे मुन्ना
को भी यह बतलाया है।
रोना बहुत बुरा है भैया
बहुत बार समझाया है।।
किन्तु किसी दिन भी अम्मा वह
रोये बिना नहीं सोता

सोकर जब उठता है तब भी
कितना मचल-मचल रोता।।
देखो अब भी तो रोता है
आंसू से मुंह गीला है।
मुन्ना कहना नहीं मानता
मां, वह बहुत हठीला है।।
रोने पर भी मुन्ना का
करती हो मां, बहुत दुलार।
हम रोते हैं कभी-कभी तो
हमको क्या न करोगी प्यार।।

इतिहास जानना क्यों जरूरी है?

(चौथी किश्त)

❑ अभिनव

अब तक आपने पढ़ा ...

भारतीय महाद्वीप के उत्तर-पश्चिमी हिस्से में पनपी हड़प्पा सभ्यता का अंत हुआ। कारण क्या थे यह विवाद का विषय है, लेकिन सबसे मजबूत तर्क मध्य-एशिया से आई खानाबदोश जाति आर्यों से टकराव माना जाता है। अब हम आर्यों द्वारा स्थापित सामाजिक-आर्थिक ताने-बाने पर विचार करेंगे।

-सम्पादक

आर्यों ने जिस समय आज के भारत और पाकिस्तान की भूमि पर अपनी सभ्यता को खड़ा किया उसे **वैदिक युग** के नाम से जाना जाता है, और उनकी सभ्यता को **वैदिक सभ्यता** कहा जाता है। यह वैदिक विशेषण इसलिए इस्तेमाल किया जाता है क्योंकि वेदों की रचना आर्यों ने ही की थी। आप जानते ही होंगे कि उन्होंने चार वेद रचे थे- ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद। इनमें से प्राचीनतम था ऋग्वेद और शायद आर्यों की भारतीय महाद्वीप में प्रारंभिक जीवन का सबसे प्रामाणिक स्रोत। ऋग्वेद 1028 स्तुतियों का संकलन है, जिनमें से अधिकांश यज्ञों और बलि-दानों में इस्तेमाल होने वाली प्रार्थनाएं थीं।

वैदिक रचनाओं को दो कालों में बांटा जा सकता है- **प्रारंभिक वैदिक युग** (1500-1000 ईसवी पूर्व), जिनमें ऋग्वेद की रचना हुई, और दूसरा है **उत्तर वैदिक युग** (1000-600 ईसवी पूर्व), जिसमें अन्य वेदों की रचना हुई। इस अंक में हम प्रारंभिक वैदिक युग पर चर्चा करेंगे।

प्रारंभिक वैदिक संस्कृति का भौगोलिक विस्तार मुख्यत: अविभाजित पंजाब (यानी भारतीय पंजाब और पाकिस्तान में स्थित पंजाब) और दिल्ली का क्षेत्र में था। ऋग्वेद में जिन नदियों का जिक्र आता है वे हैं सिन्धु, सरस्वती (जो अब राजस्थान के रेगिस्तान में खो चुकी है), घग्घर, सतलज, बीस, रावी, चिनाब, और झेलम। आर्य, ऋग्वेद के अनुसार, यमुना के आगे के क्षेत्र से परिचित नहीं थे।

आर्य जब भारत में आए तो उन्हें यहां पहले से रह रहे कबीलों से प्रतिरोध का सामना करना पड़ा। आर्यों ने सबसे शत्रुतापूर्ण रुख उन लोगों की तरफ अपनाया जिन्हें ऋग्वेद में पाणि कहा गया है जो अमीर थे और आर्य पुरोहितों को संरक्षण देने और वैदिक कर्मकाण्ड करने से इंकार करते थे। लेकिन ऋग्वेद में सबसे अधिक नफरत के साथ जिन लोगों का जिक्र होता है वे हैं दास या दस्यु लोग। ये लोग संभवत: हड़प्पा संस्कृति के बचे-खुचे लोग

थे। इन 'काली चमड़ी वाले', 'मैले' और 'यज्ञ न करने वालों' के रूप में जिक्र किया गया है जो आर्यों की भाषा नहीं बोलते थे। ऋग्वेद में अक्सर आर्यों के युद्धदेव इंद्र का इन दासों के सर कुचलने और अपने वज्रदण्ड (इन्द्र का हथियार) से शत्रु को पराजित करने के लिए आह्वान किया गया। आर्यों की युद्ध तकनीक काफी उन्नत थी। नतीजतन उन्होंने अपने सभी शत्रुओं को हराने में सफलता मिली। वे घोड़ों से खींचे जाने वाले रथों पर चढ़कर अपना युद्ध लड़ते थे जिससे उनके लड़ने के तरीके में काफी तेजी थी।

लेकिन अन्य क्षेत्रों में आर्यों के तकनीक काफी पिछड़ी हुई थी क्योंकि वह शहरों में रहने वाली जाति नहीं थी, जैसे कि हड़प्पा सभ्यता के लोग। इसका अन्दाजा सिर्फ इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि उन लोगों का धातुओं के बारे में ज्ञान बहुत ही सीमित था। पूरे ऋग्वेद में सिर्फ एक धातु का जिक्र आता है अयास यानी कांसा (bronze)।

आर्यों का आर्थिक जीवन

आर्य ऐसी खानाबदोश जातियों के रूप में भारत आए थे जो पशुपालन और कृषि की गतिविधियों में भी संलग्न रहते थे। पशुपालन में आर्य काफी निपुण थे। गाय-बैल उनके लिये सर्वाधिक मूल्यवान थे। गाय-बैल आदि को समृद्धि का स्रोत माना जाता था और उन्हें बढ़ाने के लिए प्रार्थनाएं की जाती थीं। जिस प्रकार आज मुद्रा का उपयोग विनिमय के लिए होता है वैसे ही उस समय गायों का उपयोग विनिमय के लिए होता था क्योंकि मुद्रा की ही तरह गायें उस समय समृद्धि को नापने की इकाई थीं। गायों के लिए युद्ध भी लड़े जाते थे जिन्हें ऋग्वेद में गविष्टि कहा गया है। एक छत के नीचे गाय रखने वालों को एक गोत्र का कहा जाता था। यह शब्द साझे पूर्वजों के लिए आज भी इस्तेमाल किया जाता है। गायों को न मारे जाने वाले पशु (अघ्न्य) के रूप में चित्रित किया गया है। मगर ऐसा किसी धार्मिक वजह से नहीं था। क्योंकि इस बात के स्पष्ट प्रमाण हैं कि गायों का भोजन विशेष अतिथियों को परोसा जाता था, इसीलिये ऐसे अतिथियों को गोहन (गाय का वध करने वाले) के रूप में चित्रित किया गया है। दूसरे, यज्ञों में भी गाय की बलि दी जाती थी। बैलों का इस्तेमाल कृषि में किया जाता था। उन्होंने गायों-बैलों के अलावा बकरी, भेड़, घोड़े आदि को भी पालतू बनाया।

इस प्रकार हम दखते हैं कि आर्यों की प्रमुख आर्थिक गतिविधि पशुपालन थी। लेकिन वे खेती भी करते थे। ऋग्वेद से पता चलता है कि उन्हें मौसमों का भी कुछ ज्ञान था। ऋग्वेद में पांच ऋतुओं का जिक्र आता है। वे यह भी जानते थे कि कृषि के लिए कौन-सी ऋतु उपयुक्त है। इस बात के पूरे सबूत हैं कि वे जंगलों को साफ कर कृषि-योग्य भूमि बनाने के लिए आग का इस्तेमाल करते थे। ऋग्वेद के बाद के हिस्सों में जोतना, बोना, काटना, कूटने का जिक्र आता है, जिससे पता चलता है कि प्रारंभिक वैदिक युग के अंत तक कृषि अर्थव्यवस्था काफी व्यवस्थित हो गई थी। लेकिन इस समय तक आर्य सिर्फ एक फसल की खेती जानते थे जिसे वे यव और हम जौ (Barley) कहते हैं। एक महत्वपूर्ण बात यह है कि गाय-बैलों और पशुओं के रूप में जो सम्पत्ति होती थी उस पर एक व्यक्ति का हक नहीं होता था बल्कि पूरे कबीले का हक होता था लेकिन जमीन के मामले में ऐसा नहीं था। लेकिन ऐसा लगता है कि जमीन भी पूरी तरह से निजी सम्पत्ति नहीं बनी थी क्योंकि पूरे ऋग्वेद में जमीन को नापने की विधि के लिए तो कई शब्द आते हैं लेकिन एक बार भी जमीन के बेचने, खरीदने या गिरवी रखने का जिक्र नहीं आता है और इस चीज के लिए कोई शब्द भी नहीं है।

प्रारंभिक वैदिक युग की राजनीतिक और सामाजिक संरचना के बारे में हम अगली किश्त में बात करेंगे

क्रमशः

छत पर फंसा गया बिल्ला

❑ विताउते जिलिन्स्काइते

बारहमंजिली इमारत की सपाट छत पर टेलीविजन के एन्टेनों के बीच एक घुमक्कड़ बिल्ला बेचैनी से छटपटा रहा था। उसे किसी तरह विश्वास न हो पा रहा था कि वह फंस गया है। लोग उसे व्यर्थ ही घुमक्कड़ बिल्ला नहीं कहते थे। वह बेहद चालाक और खूब फुर्तीला था। सड़क पर दौड़ती मोटर गाड़ियों के बीच से निकल भागता था। कभी झपटकर पेड़ों पर चढ़ जाता, तो कभी एक बरामदे से दूसरे बरामदे में पहुंच जाता। लेकिन यहां इस छत पर ...

यह घटना यूं घटी। लगभग एक घण्टे पहले घुमक्कड़ बिल्ला बारहवीं मंजिल की सीढ़ियों पर खर्राटे ले रहा था कि इसी बीच एक टी.वी. मैकेनिक लिफ्ट से ऊपर पहुंचा। वह लोहे की एक छोटी सीढ़ी के सहारे छत से सटे लौह द्वार तक आया और ताला खोलकर छत पर पहुंच गया। घुमक्कड़ बिल्ले ने कभी इतनी ऊंची छत पर घूमने का सुख न उठाया था। आखिर उसे जिज्ञासा तो थी ही? देखते ही देखते वह बिल्ला सीढ़ियों पर चढ़ा और छलांग लगाकर छत पर पहुंच गया। शायद टी.वी. मैकेनिक ने उसे नहीं देखा, अगर देखा भी हो तो अपने काम में व्यस्त होने के कारण उसे भूल ही गया। इस बीच बिल्ला नीचे दूर-दूर तक फैले शहर को मंत्रमुग्ध होकर देखने लगा। "अहा, कितना सुन्दर दृश्य है! दुनिया कितनी बड़ी है! आखिर यह हुई न बात!" बिल्ले ने मन ही मन सोचा। जब तक कि बिल्ला आंखें फाड़कर शहर को देखता रहा, गटरगूं करते कबूतरों को उड़ाता, पंजे से अपनी मूंछें ऐंठता, म्याऊं-म्याऊं करता रहा, ताकि नीचे दौड़ता हुआ कुत्ता बाबिक उसे देख ले, इस बीच टी.वी. मैकेनिक अपना काम खत्म करके छत से बाहर निकला और दरवाजा भड़ाक से बन्द हो गया। उसके बन्द होते ही बिल्ला हड़बड़ाया, उस ओर दौड़ा, लेकिन तब तक देर हो चुकी थी।

इस तरह वह अस्फाल्ट से ढंके लम्बे-चौड़े मैदान-सी छत पर अकेला रह गया, जहां टी.वी एन्टेनों की लम्बी कतार और चिमनियों के अलावा कुछ न था। सच है कि शुरू में बिल्ले को यह न अखरा, बल्कि वह खुश हुआ। उसे इस साहसिक अभियान पर गर्व था। यहां से वापस लौटकर वह अपने दोस्त बाबिक समेत सभी बिल्ले-बिल्लियों को इस अभियान के किस्से सुनाएगा! उसने खुद को धीरज बंधाया: "फिक्र न करो, यार! कहीं इससे बुरा हाल
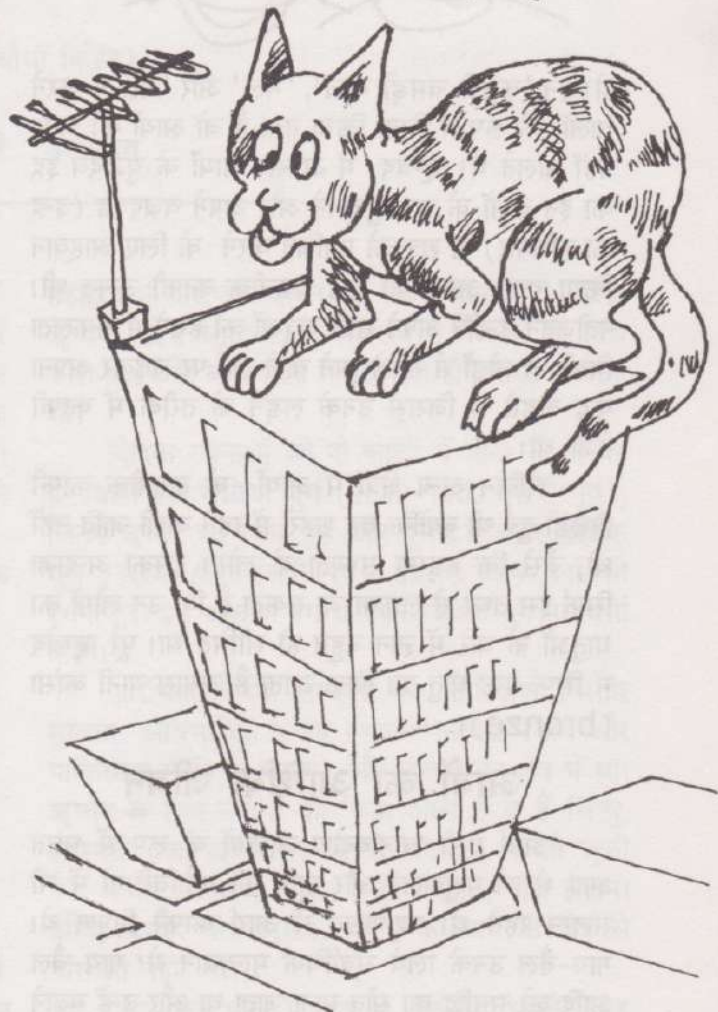
होता तो! अपने बूढ़े दादा जी फिजूल तो नहीं कहते थे: तिकड़मी बिल्ला रास्ता ढूंढ लेता है!"

सूरज की किरणों में पर्याप्त गर्माहट थी। अस्फाल्ट से पिघले तारकोल की भीनी-भीनी गन्ध घुमक्कड़ बिल्ले के नथुने में समा गई और वह मजे से धूप में पसर गया। जल्द ही नींद आ गई। नींद में बिल्ले ने एक मोहक सपना देखा। ऐसा सपना उसने कभी न देखा था। शायद उसके

बूढ़े दादा ने भी नहीं! उस तरह का सपना देखने के लिए तो सौवीं मंजिल पर ही चढ़ना होता है, बारहवीं मंजिल की बात क्या।

सपने में घुमक्कड़ बिल्ले को क्या दिखा? उसने देखा कि वह बादलों पर उड़ रहा है। वहां खूब मोटी मखमली कालीन बिछी है और वह भी ऐसी लम्बी कि उसका दूसरा छोर जमीन तक फैला हुआ है। इस मखमली कालीन पर ऊपर की ओर एक खूबसूरत बग्घी चली आ रही है, उसमें सोलह सफेद चूहे जुते हैं। और गाड़ीवान की जगह एक झूमर चुहिया मजे से बग्घी हांक रही है। वह चाबुक की तरह अपनी लम्बी दुम को घुमा-घुमाकर बग्घी में जुते चूहों पर फटकार रही है और चूहे उसे पूरी शक्ति से उड़ाए लिए जा रहे हैं। देखते ही देखते वह बग्घी बादलों तक पहुंची और घुमक्कड़ बिल्ले के पास ठहर गई। चुहिया ने बग्घी का दरवाजा खोला और बग्घी में रखा हुआ शुतुरमुर्ग के पंखवाला हैट और मुलायम चमड़े का एक जोड़ा जूता निकाला – हूबहू वैसा ही सुन्दर-सा, जैसा कि उस "बूटवाले बिल्ले" ने एक रंगीन तस्वीर में पहन रखा था। और जरा सोचिये कैसी-कैसी शानदार चीजें हमारे बिल्ले के लिए उपहार में आई थीं! चुहिया ने बड़े अदब के साथ उसे हैट भेंट किया, जूते पहनाए और फिर वह सुनहरे राजचिह्न वाली उस बग्घी पर बड़ी शान से बैठ गया! चुहिया ने सांय की आवाज के साथ अपनी चाबुकनुमा दुम को फटकारा और बग्घी चल पड़ी – कालीन-पथ पर, धरती की ओर!

बग्घी शान से चली जा रही थी। शहर के सभी बिल्लियों, कुत्तों, कौवों और गौरैयों ने उसे ईर्ष्या से देखा। गर्व से तना घुमक्कड़ बिल्ला खिड़की के बाहर झांक-झांककर मांस के टुकड़ों को मुट्ठी भर-भर बड़ी उदारता से लुटाने लगा। खूब छीना-झपटी होने लगी! यह सब ऐसा मजेदार था, इतना लुभावना था कि बिल्ला नींद में मुस्करा उठा। और ... उसकी नींद टूट गई। अलसाया हुआ घुमक्कड़ बिल्ला खुशी से पंजे उठाते हुए जरा और पसर गया। वह अपना थूथुन धोने ही जा रहा था। पर उसे अचानक ख्याल आया कि वह कहां आ फंसा है। दूर क्षितिज पर सूरज डूब रहा था, छत ठण्डी हो चली थी। बिल्ले का दिल बैठ गया। वह छत के दरवाजे की ओर भागा – शायद वह खुल ही गया हो? लेकिन वह तो पूर्ववत बन्द था। पर हाय रे, उसे तो खूब जोर से भूख लगी है और खाने की चीजें छत पर तो कोई रखता नहीं। वैसे वह किसी मोटे सुस्त कबूतर को दबोचने की कोशिश कर सकता था। लेकिन कबूतर इस नए खतरे से सतर्क थे, वे सब पड़ोस की छत पर बसेरा ले रहे थे। वहां उन्हें कोई खतरा न था। उनकी छत पर बिल्ला जो बैठा था। अब वे वहां बैठे हुए अभागे बिल्ले की हरकतें देख-समझ रहे थे।

मायूस बिल्ला छत के किनारे पहुंचा और उसने झांककर नीचे देखा। बाप रे, इत्ता ऊंचा है! उसका सिर चकराने लगा। नीचे काले धब्बे की तरह, सुनसान मैदान दिखाई दे रहा था। लेकिन बिल्ले को अच्छी तरह मालूम था कि पास ही छत के नीचे खिड़कियां और बाल्कनियां थीं। तो क्या वह छलांग लगाने की कोशिश करे? नहीं! इसका तो इरादा ही छोड़ दो। कूदकर रेलिंग को पकड़ पाना संभव न था। और चूकने का मतलब था गिरकर मर जाना।

"म्याऊं-म्याऊं-म्याऊं!" बिल्ले ने गला फाड़कर चिल्लाना शुरू किया। उसे उम्मीद थी कि कोई उसकी मदद के लिए आगे आएगा।

उसने दरवाजा खुलने की आहट सुनी, कोई बाल्कनी में आया।

"म्याऊं-म्याऊं-म्याऊं!" बिल्ले ने चीखने-चिल्लाने में पूरी शक्ति लगा दी।

"चुप रह! सत्यानाश हो तेरा!" बाल्कनी से एक गुस्सैल आवाज सुनाई दी और बिल्ले की उम्मीद पर पानी फिर गया।

बेचारा बिल्ला बस रोने को ही था। वह छत के किनारे से दूर हट गया और टी.वी. एन्टेनों की कतार को जरा गौर से देखने लगा। सहसा उसे एक युक्ति सूझी: "अगर किसी एक एन्टेना को गिरा दिया जाए तो बात बन सकती है। यानी कि टी.वी. खराब हो जाएगा और एन्टेने की मरम्मत के लिए फिर से मैकेनिक आएगा!" बिल्ला खूब जोर से दौड़ा और उसने एक भरपूर हमला एन्टेनेवाली लोहे की छड़ पर किया। एन्टेना टस से मस न हुआ, बल्कि उससे टकराते ही वह दर्द से कराह उठा। तब उसने एक और तरकीब सोची! इस बार उसने धीरे-धीरे एन्टेने को गिराने की कोशिश की लेकिन वह पहले की तरह हिला तक नहीं।

"लो, आ गई शामत!" उसने मानते हुए एक गहरी सांस ली।

रात हो चली। चांद निकल आया।

बिल्ले ने ठण्ड से ठिठुरते हुए किसी तरह रात बिताई। इस बार उसे स्वप्न से भी राहत न मिली। जब कभी वह आंखे मूंद लेता तो उसके सामने वे मांस के

बड़े-बड़े टुकड़े नाचने लगते जिन्हें वह स्वप्न में बग्घी से लुटा रहा था। ... इस तरह वह रात भर करवटें बदलता रहा। और अन्त में सुबह हो गई। बिल्ले की जान में जान आई। चमकते सूरज की गर्मी ने उसे नई शक्ति दी। वह फिर से छत के किनारे पहुंचा। इस बार नीचे मैदान में उसका दोस्त – कुत्ता बाबिक दिखलाई दिया। वह दीवार के करीब रुका। फिर उसने ऊपर की ओर देखा, बिल्ला छत से नीचे झांक रहा था।

"अहाहा!" बाबिक ने हैरानी से पूछा। "यार, तुम छत पर हो? नीचे आओ! क्या वहां बहुत सारे चूहे हैं?"

"भाई, मैं यहां टी.वी. एन्टेनों की रखवाली करता हूं।" बिल्ले ने जरा वजनदारी से कहा। "तनख्वाह भी ठीक-ठाक है। रोज शाम को टर्की चिड़िया की एक टांग खाने को मिल जाती है!"

"क्या समूची टांग? लेकिन तुम इतने दुबले क्यों हो?" कुत्ते ने हैरानी से पूछा।

"अरे, तुम्हारी आंखे कमजोर हो गई हैं। चश्मा लगाओ, चश्मा।" बिल्ले ने रुखाई से कहा।

कुत्ते बाबिक ने कोई उत्तर न दिया, अन्दर से मुर्गी की हड्डी बाहर उठा लाया। और सुबह का नाश्ता करने लगा।

ऊपर छत पर खड़े बिल्ले को भी मुर्गी की महक लगी और हड्डी चबाने की कड़कड़ाहट सुनाई दी। बिल्ले के पेट में कहीं ज्यादा जोर-जोर से चूहे कूदने लगे, आंख के सामने अंधेरा-सा छा गया।

"अभी मौका है, नीचे उतर आओ। थोड़ा तुम्हें भी मिल जाएगा।" बाबिक ने दोस्त बिल्ले से कहा।

"यार, तुम भी!" बिल्ले ने जरा रोब से कहा। "मैंने वचन दे रखा है, यहां से एक क्षण के लिए न हटूंगा। समझ गए न!"

उसने बाबिक को सच-सच बता दिया होता कि वह विपत्ति में फंस गया है। लेकिन कुत्ता उसकी मदद भी क्या कर पाता, बल्कि शहर भर के कुत्ते-बिल्लियों को घूम-घूमकर किस्से सुनाता कि घुमक्कड़ बिल्ला बारहमंजिले मकान की छत पर फंस गया है। तब तो सभी उसका मजाक उड़ाते। इसलिए बिल्ला वहां से हटा और छत की दूसरी ओर पहुंच गया, ताकि यहां मुर्गी की हड्डी की गंध उस तक न पहुंचे। लेकिन यहां छत से सटे बिजली के तार पर बैठी गौरैयां गपशप कर रही थीं। बिल्ले ने चिड़ियों से नजर बचाई और वहां से हटकर चिमनी के पीछे छिप गया। लेकिन एक चिड़िया ने उसे देख लिया। वही हुआ, जिसका बिल्ले को भय था। चिड़िया ने जोर-जोर से चहकना शुरू किया:

"वाह! खूब, बहुत खूब! छत पर फंस गए बिल्ले मियां। हाय रे, बेचारा नीचे उतर ही नहीं पा रहा है।"

"फंस गए, फंस गए!" चिड़ियों ने चहकते हुए कहा। उनके फुदकने और झूम-झूमकर बतियाने से बिजली का तार हिलने लगा। उसी समय चिड़ियों के संगीत निदेशक ने अपने पंख लहराए और शौकिया कोरस गायकों ने बिल्ले को चिढ़ाते हुए गाना शुरू किया:

"हंसी आ रही – हा, हा, हा!
हाय बेचारा, हा, हा, हा!
गाज गिरी जब अक्ल के ऊपर!
बिल्ला फंस गया छत के ऊपर!
बोलो बेचारा अब क्या करे?
ताला बन्द है भूखों मरे!
उतर नहीं सकता वह भाई!
बुद्धू राम की शामत आई!"

बिल्ले को चिढ़ाने वाला गीत सुनते ही उसके वफादार दोस्त बाबिक को बुरा लगा, वह चिड़ियों पर जोर से गरजा:

"बकबक बन्द करो। मेरे दोस्त बिल्ले को पहरेदारी करने दो। वह कोई ऐरा-गैरा नहीं है। एन्टेना-रक्षक है, उसे तनख्वाह मिलती है। फिजूल की बातें मत करो।"

लेकिन चिड़ियां भला क्यों चुप रहतीं? गायकों ने और जोर-जोर से गाना शुरू किया:

"हंसी आ रही – हा,हा,हा!
हाय बेचारा हा,हा,हा!
एन्टेरा-रक्षक बिल्ला प्यारा!
दिखता है वह सबसे न्यारा!
छत पर कांपे सारी रात!
नहीं समझ में आती बात!
एन्टेने सब उड़े जा रहे!
घर से बुद्धू यहां आ रहे!"

इस तरह घुमक्कड़ बिल्ले का दूसरा दिन भी बड़ी परेशानी से बीता। इतना ही होता तो शायद गनीमत थी। लेकिन शाम हुई तो आसमान पर काले बादल घिर आये, बिजली चमकी, बादल गरजे और मूसलाधार बारिश होने लगी। आखिर बेचारा बिल्ला सिर कहां छिपाता। वह खुली छत पर एकदम लाचार-सा पड़ा रहा और पानी से तरबतर हो गया। बारिश खत्म हुई तो थरथर कांपता हुआ बिल्ला भीगे चीथड़ों का ढेर-सा बन गया। बेचारा मरा तो

नहीं, पर सारे करम हो गए!

"बूढ़े दादा नाहक यह कहते थे – तिकड़मी बिल्ला रास्ता ढूंढ लेता है।" उसने मायूसी से सोचा। "मैं जरा देखता कि अगर वह आज मेरी जगह होते, तो कौन-सी राह ढूंढ निकालते! और वो सूट-बूटवाला बिल्ला! उसकी अक्ल भी जवाब दे जाती।"

सुबह आसमान साफ था! सूरज की तप्त किरणों ने भीगी छत को सुखा दिया। बिल्ले की भीगी खाल और रोएं सूख गए। लेकिन बिल्ला भूख से बेहाल था। कमजोरी के कारण बड़ी मुश्किल से पैर उठा पा रहा था। उसकी हालत रबड़ के उस गेंद की तरह थी, जिसकी हवा निकल गई हो! दोपहर में बाबिक ने भौंकना शुरू किया। उसने भौंककर बिल्ले का हाल पूछा। यानी उसकी ड्यूटी का क्या हाल है और टर्की की टांग स्वादिष्ट है न? लेकिन बिल्ले ने उस ओर देखा तक नहीं। कौन शक्ति बरबाद करे? वैसे ही भूख के मारे जान निकली जा रही है। ... वह लेटा हुआ एक बड़े-से कौवे को बेमन से देख रहा था। कौवा अपनी चोंच साफ करने छत पर आया था। वह खाया-पिया और सुस्त लग रहा था।

"काश, उसके पंख ही मिल जाते।" उदास मन से बिल्ले ने सोचा। और अचानक उसकी तीव्र बुद्धि काम कर गई।

वह अपने पंजे के बल बैठ गया, जो कमजोरी से कांप रहे थे। वह बनकर बैठा रहा जैसे उसे कौवे में कोई रुचि नहीं है। लेकिन चुपके-चुपके उस ओर खिसकने लगा। आलसी कौवे ने एक आंख से बिल्ले की ओर देखा और निश्चिन्त होकर अपनी चोंच साफ करता रहा। आखिर उससे डरना क्या? बिल्ला तो इतना मरियल है कि वह उसे एक चोंच में ही ठीक कर देगा।

बिल्ला काफी करीब तक पहुंचकर छत के किनारे बैठ गया। उसने कौवे को न देखने का बहाना किया, लेकिन उसके सतर्क कान क्षण प्रति क्षण की आहट ले रहे थे: कौवे ने चोंच साफ की, अपने पंख फड़फड़ाए, पंजे पैने किए और बस उड़ने ही वाला था। उसने धीरे से कांव कहा, बेशक उसने एक कौवे की कांव का उत्तर दिया था उसने अपनी गर्दन तानी, पंख फैलाए और। ...

इधर जैसे ही कौवा उड़ने के लिए उछला बिल्ले ने अपनी शेष शक्ति जुटाकर एक जोरदार छलांग लगाई और उड़ते ही कौवे की पीठ पर सवार हो गया। हैरान कौवा लड़खड़ाकर गिर ही पड़ा होता किन्तु हवा में अपना संतुलन बनाए रहा और नीचे की ओर मंथर गति से उड़ा। लेकिन बिल्ला पहले की तरह भारी-भरकम होता तो निश्चित ही वह कौवा पत्थर की तरह नीचे आ गिरा होता। तब कौवा और उसकी पीठ पर सवार मुसाफिर दोनों गिरकर दम तोड़ चुके होते। लेकिन दो दिन के निराहार जीवन ने बिल्ले का वजन आधा कर दिया था। शायद इसीलिए वह कौवा बिल्ले को सुरक्षित नीचे उतार लिया, जबकि यह आसान काम न था। फिर क्या था? बिल्ला सिर पर पांव रखकर भागा। उसको डर था कि कहीं कौवा उसे मजबूत चोंच के ताबड़तोड़ प्रहार से घायल न कर दे!

"बचाओ, बचाओ!" घबड़ाए हुए कौवे ने आवाज दी। और फिर "बचाओ, बचाओ!" की रट लगाने लगा। इसके अलावा कुछ बोल न सका!

दूसरे कौवे उड़कर नीचे आए:

"क्या हुआ रे? क्या बिल्ले ने हमला किया था?"

"नहीं, नहीं!" कौवे ने विरोध किया। वह अपने संबंधियों और दोस्तों के सामने शर्मिन्दा नहीं होना चाहता था। "दरअसल ऐसी कोई बात नहीं है!"

"फिर बताओ न, क्या हुआ?" सभी ने जोर देकर पूछा।

"भाइयो, कोई घबड़ाने की बात नहीं," कौवे ने बात

बनाते हुए कहा। "मैंने छत पर एक खूब मोटा-ताजा बिल्ला देखा। मेरा मन ललचाया और मैंने उसे मारने का फैसला किया। बिल्ले का शिकार! क्या बढ़िया दावत होती? अपने दोस्तों को बुलाता और जैसाकि आप सब जानते हैं – आज मेरा जन्मदिन भी है। मैंने आव देखा न ताव, बस उसकी गरदन पकड़ ली और उसे नीचे लिए आ रहा था। पर ससुरा बहुत वजनी था। अफसोस! उसे छोड़ना पड़ा ..."

"वाह रे दिलेर!" कौवों ने उसकी तारीफ की। "बहुत खूब! शिकार और मोटू बिल्ले का! शाबाश, मेरे शेर।"

और बिल्ले मियां इस वक्त छत का सफर पूरा करके सीढ़ी के नीचे खाने में जुटे हुए थे। कुत्ते बाबिक ने उसे एक हड्डी उपहार में दी। भूखा बिल्ला जल्दी-जल्दी उसे चबाए जा रहा था।

"भाई, तुम्हारी छतवाली नौकरी समाप्त हो गई है?" बाबिक ने विनम्रता से पूछा। उसने भूखे दोस्त को हैरानी से देखा। "भाई, क्या टर्की चिड़िया का मांस जायकेदार होता था?"

"बेहद खराब। छोड़ो भी उसकी बात। सूखा और जला-भुना, ऊपर से ढेर सारा नमक-मिर्च डाल देते थे। बताओ, उसे कौन खाएगा। मैंने तो इन्कार कर दिया।" बिल्ले ने कुत्ते को समझाया। "सच, ऐसी चौकीदारी से बाज आया। क्या खूब? एन्टेनों की रखवाली। अब तुम्हीं बताओ: जब मेरे पास अपना टी.वी. सेट नहीं है, तो मैं पराए एन्टेनों की चौकीदारी क्यों करता फिरूं? छत पर आखिर मेरी जागीर तो है नहीं! मैंने तुरन्त फैसला किया और कौवे की पीठ पर बैठकर नीचे चला आया।"

"शाबाश, मेरे दोस्त!" कुत्ते ने हैरानी से कहा।

थोड़ी देर बाद घुमक्कड़ बिल्ले ने एक प्याला दूध पिया और सीढ़ी के कोने में बिछे बिस्तर पर आराम से लेटकर सोचने लगा:

"दादा जी ठीक ही कहते थे: तिकड़मी बिल्ला रास्ता ढूंढ ही लेता है।"

पहेली

बूझो तो जानें

1– बूझो सोचो मेरा नाम।
कभी न घटना मेरा काम।।
आगे बढ़ना मेरा काम।
बोलो बच्चों मेरा नाम।।

2– देखो मेरे पैर नहीं हैं, तब भी दौड़ लगाती।
देखो मेरे जीभ नहीं है, तब भी गुनगुन गाती।।
मेरा मुखड़ा देख-देख सब दिन भर दौड़ लगाते।
मेरे ही संकेतों पर चल कर्मशील बन जाते।।

3– जलचर नभचर थलचर सारे।
जीवित हैं सब मेरे सहारे।।
पानी मेरा बाप, पानी ही मेरा बेटा।
मुंह ऊपर कर देखो, मैं हूं ऊपर लेटा।।

4– जो कभी नहीं था वह क्या है।
जो कभी न होगा पर वह है।।

5– वर्ष में एक बार ही आता हूं।
खुशी में मुंह मीठा करवाता हूं।।

6– पौधारोपण के बिना।
उगते बढ़ते जाएं।।
काटे से भी ना घटें।
और उगे बढ़ जाएं।।

उत्तर- (1) उम्र (2) घड़ी (3) हवा (4) बादल (5) आम (6) बाल

लघु कथा

लड़का और सोन-चिरैया

एक गरीब लकड़हारा था। जंगल के पास वाले गांव में रहता था। उसकी पत्नी बड़ी नेकदिल महिला थी। मगर उसका लड़का बड़ा दुष्ट स्वभाव का था। दिन भर गुलेल लेकर इधर-उधर घूमता रहता था। जंगल के सारे पशु-पक्षी लड़के से दुखी थे। दिन भर के भागदौड़ के बाद जब कोई पक्षी थका-हारा पेड़ पर आराम करता होता तब लकड़हारा का लड़का चुपके से उस बेचारे पक्षी पर गुलैल चला देता। पक्षी घायल होकर पेड़ से गिर जाते। कुछ तो मर जाते, कुछ घायल होकर अपंग हो जाते। पक्षी लड़के को अपनी तरफ आते देखकर भयभीत हो जाते। कौआ काका कांव-कांव करके फुर्र से उड़ जाते। कोयल चाची लड़के की झोपड़ी के पास कभी भी गीत सुनाने नहीं आती। झबरा कुत्ता गांव भर के घरों की रखवाली करता मगर लकड़हारा के दरवाजे पर नहीं आता। रात में चोर आये तब भी नहीं भौंकता।

कल ही की बात है। झबरा कुत्ता प्यासा था। पानी के लिए नहर की तरफ जा रहा था। रास्ते में लकड़हारा का लड़का मिला, झबरा ने दुम हिलाकर लड़के का स्वागत किया। लड़के ने पत्थर उठाया। झबरा लड़के की नियत देखकर भागा। लेकिन पत्थर झबरा को लग ही गया। मगर पत्थर की चोट से उसकी पिछली टांग में दर्द होने लगा। अब झबरा तीन टांगों से ही चल रहा है और मन ही मन लड़के को गाली देता घूम रहा है।

सोन-चिरैया जंगल में नयी आई है। सोन-चिरैया का मन इस जंगल में लग गया है। उसने भी बबूल के बूढ़े पेड़ पर अपना घोसला बना लिया है। लकड़हारे के लड़के को वह नहीं पहचानती। वह सबको खुश होकर गाना सुनाती रहती है।

एक दिन सोन-चिरैया लकड़हारे के दरवाजे पर फुदक-फुदक कर दाना चुन रही थी। लकड़हारे का लड़का कहीं से घूमकर आया। सोन-चिरैया को देखकर लड़के ने गुलेल निकाल ली। सोन-चिरैया अपने धुन में थी। गुलेल चल गई। सोन चिरैया घायल हो गई। लकड़हारे की पत्नी ने सोन चिरैया को खून से लतफत देखा तो दौड़कर आई। लड़के को डांटा-फटकारा।

झोपड़ी में से पुराने कपड़े लाई। सोन-चिरैया को पानी पिलाया। उसके घावों को साफ करके दवा लगाई। एक टोकरी में नरम-नरम पुआल डालकर सोन चिरैया को सुला दिया।

बिल्ली सोन चिरैया का नुकसान नहीं कर सकी इसलिए टोकरी को ऊंचे स्थान पर सुरक्षित लटका दिया। सोन, चिरैया का दर्द कम होने लगा। सोन चिरैया आराम से सो गई।

लकड़हारा और उसकी पत्नी दोनों सोन चिरैया की सेवा-सुश्रुषा बड़े ध्यान से करते थे। लकड़हारे की पत्नी सुबह सोन चिरैया के टोकरी में दाना-पानी रख देती।

सोन चिरैया का घाव भरने लगा। सोन चिरैया अब टोकरी में फुदक-फुदक कर घूमने लगी। सोन चिरैया का गाना सुनकर लकड़हारा तथा उसकी पत्नी खुश होने लगते।

एक दिन सोन चिरैया स्वस्थ होकर उड़ गई। रास्ते में जितने भी पक्षी मिले सोन चिरैया ने लकड़हारा तथा उसकी पत्नी की दया की कहानी सबको सुनाया।

लकड़हारा जंगल से लकड़ी काटकर लौट रहा था। सोन चिरैया एक पेड़ के फुनगी पर बैठी थी। सोन चिरैया ने देखा कि एक झाड़ी में बाघ घात लगाकर बैठा है। सोन चिरैया झट उड़ गई।

बाघ के ऊपर मंडराकर उसे चिढ़ाने लगी। बाघ चिढ़कर सोन चिरैया पर झपट पड़ा। झाड़ियां हिलने लगी।

झाड़ियों को हिलते देखकर लकड़हारा चौकन्ना हो गया। खतरे का आभास होते ही वह दूसरे रास्ते की ओर मुड़ गया। सोन चिरैया ने राहत की सांस ली।

लकड़हारे की पत्नी बीमार पड़ गई। सोन चिरैया रोज सुबह-सुबह आकर उसके सिरहाने बैठ जाती। सोन चिरैया के मीठे-मीठे गाने सुनकर लकड़हारे की पत्नी को आराम मिलता। धीरे-धीरे वह ठीक हो गई।

लकड़हारे के लड़के को यह देखकर बड़ा दुख हुआ। उसने मन में संकल्प लिया। अब वह किसी पशु-पक्षी को नहीं सतायेगा। उसने गुलैल नहर में फेंक दी। अपने द्वार पर झबरा के आने पर उसे रोटी देने लगा। झबरा भी अब रात को उसके मकान की चौकीदारी करने लगा।

धीरे-धीरे सब पशु-पक्षी उसे प्यार करने लगे।

बच्चो, हमें भी पशु-पक्षी को प्यार करना चाहिए। ये हमारे बड़े काम के जीव हैं। इनके बिना हमारा जीवन शून्य हो जाता है। तुम लोगों के घर या आस-पड़ोस में कुत्ता-बिल्ली जरूर होंगे। इनको कभी मत सताना। ये हमारे मित्र होते हैं।

विजय कुमार सिंह

नई कलम से

गांव की जिन्दगी

उफ! यह शहर की जिन्दगी
गंदगी और धुएं से भरी
बोर हो गई हूं इससे मैं
जाना चाहती हूं स्वच्छ गांव में

शहर में हर कोई अपने में मस्त रहता
मगर गांव में ऐसा कभी न होता
वे पहुंच जाते हैं सबकी मदद करने
चाहे हो वह अमीर का उलटा

शहर में धुएं के अलावा और कुछ न दिखता
गांव हमेशा पेड़ों से भरा रहता
यहां खेत ही खेत हैं दिखते
जिसकी शहर में हम कभी उम्मीद न करते
लोग गांव के होते हैं बहुत भोले
जैसे अपनी बोली में मिसरी हैं घोले

अब तुम ही बताओ कहां रहना चाहोगे
गांव में या शहर में

-पंखुरी दुबे
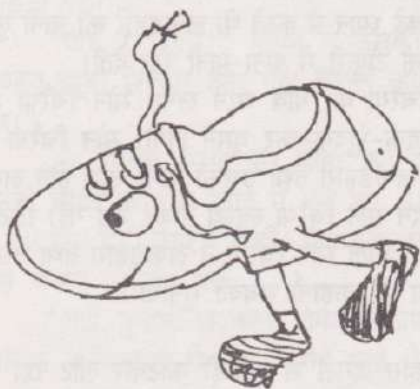
जूता

एक ऐसी चीज जो दिनभर चलती रहती है,
कभी भी नहीं थकती है,
घिसते-घिसते वह चीज खराब हो जाती है
पर शायद थकने का नाम भी नहीं लेती है।।

सफेद रंग उस पर क्या भाता है,
जैसे आधी रात में चांद नजर आता है।
हर रंग की वह चीज मिलती है,
हर रंग भी उस पर अच्छा लगता है।।

धूप हो या बरसात,
दलदल हो या पहाड़,
ऊबड़-खाबड़ हो या सपाट,
हर वक्त यह चीज देती है साथ।।

क्या बता सकते हो?
यह क्या हो सकता है?
ऐसा तो एक जूता ही हो सकता है।
सुख में, दुख में, हमेशा साथ देने वाला एक साथी जूता।।

-प्रीति जोशी

नई कलम से

अलार्म घडी

मैंने देखी एक घड़ी
टन-टन करके बोलती है
सुबह जब मैं उठती हूं तो
खूब आवाज वह करती है।

काम है उसका बड़ा अनोखा
मेरी आंखें खोलती है
देर तक मैं सोती हूं तो
अपना फर्ज निभाती है।

बटन दबाऊं उसका तो
खट से बंद हो जाती है
नाम भी उसका बड़ा अनोखा
एक तरह की घड़ी है।

उसमें एक खास बात है
उसका एक साथी है
जिसका नाम अलार्म है
दोनों ही महान हैं।

हैं तो वे अलग-अलग
पर कहलाते एक साथ हैं
नाम है उसका अलार्म घड़ी
घड़ियों के राजा का नाम है।

-शेफाली श्रीवास्तव

तितली और चूहा

बना लिया तितली ने झूला
एक मटर की बेल में
बड़ा मजा आया तितली को
झूले के इस खेल में

वहीं चूहा था तितली बोली
आओ तुम भी झूलो
चूहा बोला तितली रानी
फूल देख मत फूलो

तुमको दावत देता हूं
तरबूज कुतरने की
बोलो हिम्मत है तुममे
ये जादू करने की

-प्रभात

नई कलम से

क्रान्ति

एक क्रान्ति होती काश,
लेनिन होते हमारे साथ,
जारों की तरह होता, आज
पूंजीपतियों का नाश।

मजदूर, किसान, भारत के नौजवान,
न डरते अपनी देने से जान,
तोड़-फोड़ कर जात-पात,
देते सब इस क्रांति में साथ।

सबको मिलवा आजादी से जीने का हक आज
मिट जाता पूंजीपतियों व नेताओं का राज,
उसी दिन होता सही माइने में,
फिर से भारत आज़ाद।

-अनुभव
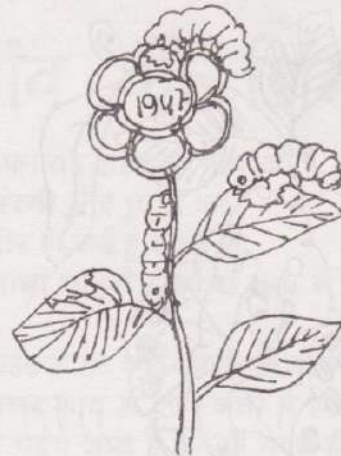
लाल रंग का पौधा

एक पौधा था लाल रंग का
पौधा था वह आजादी का
उगाया था जिसे शहीदों ने
अपने खून से सींच कर

वह पौधा आता जा रहा था
ज्यों ज्यों आदमी आहूति दे रहा था
आखिर बहुत संघर्ष और आहूतियों के बाद
वह लाल पौधा 1947 में खिल उठा

जो कीड़े उस पौधे पर लगे हुए थे
जो उस पौधे को उगने नहीं दे रहे थे
वह एक दवा से भाग गए
वह दवा बनी शहीदों के फूल से

फिर से उस फूल में कीड़े लगने शुरू हो गए हैं
वह कीड़े हैं पूंजीपतियों, राजनेताओं के
इस पौधे को फिर से कीड़ा लगने से बचाना होगा
क्रान्ति करके इन कीड़ों को भगाना होगा,
संघर्ष और लड़ाई लड़के भी,
लेनिन, एंगेल्स, भगत सिंह के
विचारों पे चलके भी

-अनुभव

नई कलम से

डाक टिकट और हम

डाक टिकट या संदेश सेवा आज हमारी जिन्दगी से बहुत गहरे तक जुड़ी हैं। डाक सेवा बिना तो हम अपने को अकेला और अपंग महसूस करेंगे। पुराने समय में संदेश भेजने का काम आज की तरह सरल नहीं था। हरकारे पैदल या घोड़े पर सवार होकर ठिकाने पर चिट्ठी-पत्री पहुंचाते थे। पक्षियों से भी संदेश भेजने का काम लिया गया। जैसे – तोता, मैना, कबूतर। इनकी मजेदार कहानियां हैं। कभी-कभी पतंगों द्वारा भी संदेश पहुंचाए गए।

यातायात के विकास ने खबर यानी चिट्ठी-पत्री के भेजने पाने को सरल बना दिया। आज डाक पहुंचाने का काम डाक विभाग करता है।

दुनिया का पहला डाक टिकट 1773 ई. में ब्रिटिश सरकार ने पटना में जारी किया। यह कांसे से निर्मित था। इसका प्रयोग डाकमुद्रा के रूप में होता था। यह ऐतिहासिक टिकट आज भी बिहार में सुरक्षित है। इसकी कीमत एक आना थी। इस पर 'अजीमाबाद डाक दो अन्नी' लिखा हुआ है। भारत के गवर्नर जनरल लार्ड क्लाइव ने सरकारी डाक सेवा की शुरुआत की। पब्लिक के लिए यह सेवा 31 मार्च 1774 को शुरु हुई।

1 मई 1840 ई. को इंग्लैण्ड में रोलैंड हिल ने पहली बार कागज का डाक टिकट बनाया। इस पर महारानी विक्टोरिया की तस्वीर बनी थी। सन 1843 ई. में ब्राजील ने भी डाक टिकट का सफल प्रयोग किया। फिर तो दस साल के अन्दर (1850 तक) अनेक देश तरह-तरह के डाक टिकट जारी करने लगे।

1852 ई. में 'सिंध-डाक' नाम से भारत में डाक टिकट जारी किया गया। वह पूरे एशिया में पहला डाक-टिकट था। 'शेर और ताड़ वृक्ष' के चिह्न सहित भारत में आम टिकट जारी हुआ – जिसका नमूना कलकत्ता के राष्ट्रीय डाक टिकट संग्रहालय में देखा जा सकता है। भारत ने ही 'हवाई-डाक' के लिए विशेष टिकट जारी किए।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद तो डाक टिकट बहुरंगी और बहुआयामी बनने लगे। इन डाक टिकटों में हम अपनी सांस्कृतिक विरासत की झलक देख सकते हैं। समय-समय पर महान स्वतंत्रता सेनानियों, लेखकों, कवियों, सशस्त्र सेनाओं, चिड़ियों, जानवरों, वैज्ञानिक उपलब्धियों आदि पर भी डाक टिकट जारी किये जाते रहे हैं। यह टिकट नासिक सिक्योरिटी प्रेस से प्रकाशित किए जाते हैं।

भारत में डाक सेवा हेतु पहला पोस्ट आफिस कलकत्ता में बनाया गया। इस समय दुनिया में दस लाख से अधिक पोस्ट आफिस हैं। इन पोस्ट आफिसों के बीच तालमेल रखने वाली पोस्टल यूनियन बनाई गई। इस यूनिवर्सल पोस्टल यूनियन की स्थापना 1874 में हुई और इसका हेड क्वार्टर स्विटजरलैंड के बर्न शहर में है।

(क्रमशः)

-प्रांजल दुबे, रोहतक

ज्ञान-विज्ञान
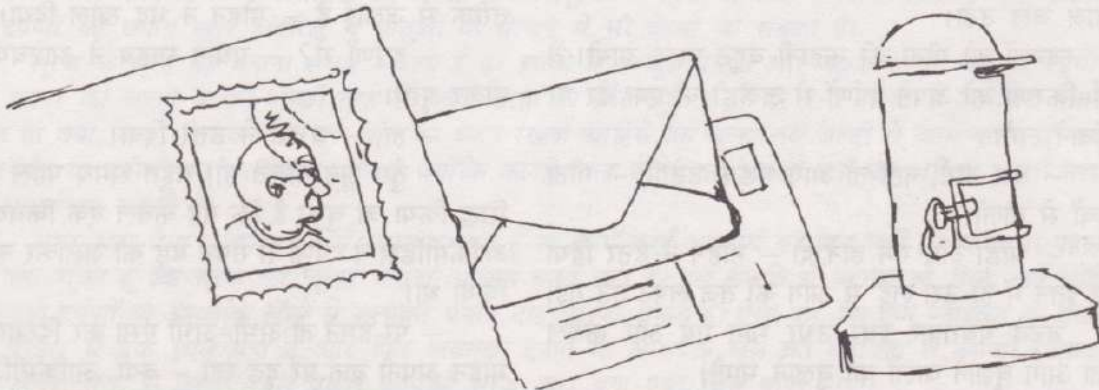
धूप में आमलेट कैसे बना सकते हैं?

गीता अहाते में बेंच पर बैठी थी और बच्चों को कहानी सुना रही थी – एक बार प्राचीन रोम के समुद्री बेड़े ने यूनान के सिराकुजा नामक नगर पर हमला कर दिया और उसके चारों ओर घेरा डाल दिया। तब आर्किमीडिस नामक वैज्ञानिक ने सिराकुजा के वासियों को समुद्र के किनारे पर एकत्रित किया और प्रत्येक नागरिक को एक-एक दर्पण देकर कहा कि वे इस दर्पण की सहायता से सूरज की किरणों को रोमन बेड़े के एक जहाज की ओर परावर्तित कर दें। सब नागरिकों ने ऐसा ही किया। दर्पणों से इतना अधिक प्रकाश व ताप इकट्ठा हो गया कि जहाज जल उठा।

बच्चों को गीता की कहानी बहुत पसंद आयी। वे सूर्य-किरणों को अपने दर्पणों से लकड़ी के एक ढेर पर पहुंचाने लगे।

– बस करो, नहीं तो आग भड़क उठेगी, – गीता बच्चों से बोली।

– थोड़ा और गर्म होने दो – मोहन ने उत्तर दिया और इतने में ही उस लट्ठे में आग की तेज लपट उठ गई।

बच्चे घबराकर इधर-उधर भाग गये और केवल गीता आग बुझाने वालों को बुलाने भागी।

कुछ मिनटों बाद सड़क पर दमकल गाड़ी की आवाज सुनाई दी। आग बुझाने वाले ठीक समय पर पहुंच गये और उन्होंने शीघ्र ही आग बुझा दी।

– यह किसकी शरारत है? आग बुझाने वालों के प्रधान ने बच्चों से पूछा।

बच्चे चुप रहे।

– मैं पूछ रहा हूं कि यह आग किसने लगाई है?

– हम सबने – गीता ने उत्तर दिया। प्रधान फायरमैन कुछ देर चुप रहा और फिर बोला: – माचिस किसके पास है?

– हमने आग माचिस के बिना आर्किमीडिस के तरीके से जलाई है – मोहन ने भेद खोल दिया।

– दर्पणों से? – प्रधान साहब ने आश्चर्यचकित होकर पूछा।

– हां, – बच्चों ने उत्तर दिया।

– तुम झूठ बोलते हो! बहुत समय पहले ही यह सिद्ध किया जा चुका है कि यह केवल एक किवदन्ती है। आर्किमीडिस ने दर्पणों से रोमन बेड़े को जलाकर नष्ट नहीं किया था।

– पर हमने तो अभी-अभी ऐसा कर दिखाया है – मोहन अपनी बात पर दृढ़ रहा – क्यों, आर्किमीडिस भी

ऐसे ही जरूर आग लगा सका होगा।

कुछ देर के लिये शांति छा गई। सब सोच रहे थे कि फायरमैन साहब क्या कहता है। वह काफी देर तक कुछ सोचते रहे और फिर बोले:

– जांच-पड़ताल का कार्य कल तक स्थगित किया जाता है, कुछ तथ्यों की सत्यता परखनी आवश्यक है।

अगले दिन सुबह हेमा, गीता और मोहन नदी के किनारे घूमने गये। उन्होंने देखा कि आग बुझाने वालों का अधिकारी जल में कांटा फेंके नदी के किनारे बैठे ऊंघ रहा है तथा उसके पास एक बडी प्लेट पड़ी हुई है।

– यह प्लेट यहां किस लिये पड़ी हुई है? – मोहन ने उससे पूछा।

मोहन की आवाज से अधिकारी की नींद टूट गई। उसने मोहन, गीता व हेमा की ओर देखते हुए कहा:

– अरे, यह तुम लोग हो, तुम जरा यह भी तो देखो कि इस प्लेट के अन्दर क्या रखा हुआ है?

मोहन ने प्लेट के अन्दर झांका तो देखा कि उसके अन्दर बहुत सारे दर्पण रखे हुए हैं। अधिकारी खड़ा हो गया, उसने प्लेट उठाई तथा दर्पणों का मुंह सूरज की ओर कर दिया। अब वह बोला:

– देखो, सूरज की रोशनी दर्पणों पर पड़ रही है और सभी दर्पण उसको एक जगह फेंक रहे हैं। अब अगर इस जगह पर हम ... – लकड़ी का लट्ठा रख दें – मोहन बीच में बोल उठा।

अधिकारी ने मोहन की ओर कठोर नजर से देखा और अपनी बांत जारी रखी: – अगर इस जगह हम एक फ्राइंगपैन रख दें तथा उसमें कुछ अण्डे डाल दें तो 15 मिनट में अन्दर आमलेट तैयार हो जायेगा।

इन शब्दों के साथ अधिकारी ने मोटी तार के बने एक स्टैंड पर एक फ्राइंगपैन रख दिया तथा अपनी प्लेट को पकड़कर इस प्रकार खड़ा हो गया कि दर्पणों से परावर्तित होकर सभी किरणें फ्राइंगपैन के तले पर पड़ने लगीं। इसके बाद उसने फ्राइंगपैन में थोडा-सा मक्खन डाल दिया। सबको यह देखकर बहुत आश्चर्य हुआ कि फ्राइंगपैन, जिसके नीचे न तो कोई अंगीठी जल रही थी और न ही कोई स्टोव रखा था, गर्म हो गया था तथा उसमें रखा मक्खन पिघलने लगा था। अधिकारी ने कुछ अंडों को तोड़कर गर्म फ्राइंगपैन में डाल दिया। पंद्रह तो क्या दो मिनट बाद ही सब लोग – मोहन, गीता, हेमा और स्वयं अधिकारी भी गरमागरम आमलेट का मजा ले रहे थे जिसे उन्होंने धूप में पकाया था।

(साभार : **'नन्हें मुन्नों के लिए भौतिकी'** से)

इस कहानी के आरम्भ में वर्णित लट्ठों के ढेर वाला प्रयोग करना व्यावहारिक रूप से लगभग असंभव कार्य है क्योंकि इसके लिये कम से कम 50 बच्चे होने चाहिये और अगर 50 बच्चे हो भी जायें तो 50 किरणों को एक ही जगह पर एकत्रित करना बहुत कठिन कार्य है।

अगर थोड़े से बच्चे इकट्ठे हो जायें तो यह प्रयोग किसी एक बच्चे की हथेली पर किया जा सकता है। जैसे ही किरणें उस बच्चे की हथेली पर पड़ेंगी, उसकी हथेली तुरंत गर्मी महसूस करेगी।

गर्म जलवायु वाले देशों में अवतल सतह पर छोटे-छोटे चपटे दर्पण लगाकर बनाये हुए परावर्तकों या विशाल व्यास वाले साधारण अवतली दर्पणों का प्रयोग सूरज के चूल्हे के रूप में किया जाता है। इस प्रकार के दर्पणों का प्रयोग खुले अंतरिक्ष में धातुओं के वेल्डन में भी किया जा सकता है।

सूरज के चूल्हे का बनाना संभव अवश्य है पर इसके लिये कुछ प्रयास और कुशलता की जरूरत पड़ेगी। इस प्रकार का चूल्हा काफी अच्छी तरह से कार्य करता है। और कुछ न हो पर 1-2 मिनट में आमलेट तैयार होना तो क्या, जल भी सकता है। इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि चूल्हा तब जल्दी से काम करता है जब फ्राइंगपैन या पतीली का रंग काला होता है क्योंकि काली सतह सफेद की अपेक्षा ताप का अधिक अच्छी तरह से अवशोषण करती है।

अगर आप ऐसा चूल्हा बनाने में असफल रहते हैं तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि मैं पहले ही बता चुका हूं कि सूरज का चूल्हा बनाना आसान कार्य नहीं है। इस स्थिति में कागज के चित्रों को छोटे अवतली दर्पणों या आवर्धक लेंसों से जलाकर प्रयोग दोहराये जा सकते हैं। ऐसा करें कि एक प्लाईवुड या तख्ते पर पेंसिल से एक चित्र बना दें और फिर अवतली दर्पण या आवर्धक लेंस की सहायता से उसकी रेखाओं को अच्छी तरह से जलायें। इस प्रकार आपको सूरज द्वारा बना एक चित्र प्राप्त होगा।

गतिविधि

अनुराग बाल केन्द्र द्वारा आयोजित आशुलेखन

आशुलेखन प्रतियोगिता में कुछ शब्द दिये गये थे जिनका प्रयोग बच्चों को अपनी रचना में करना था। सभी भाग लेने वाले बच्चों की रचनात्मकता बहुत ही सराहनीय थी उनमें से दो रचनाएं हम अनुराग के इस अंक में दे रहे हैं- सम्पादक

दिए गए शब्दों का इस प्रकार प्रयोग करो कि वह कोई घटना, संस्मरण, कहानी या रिपोर्ट अथवा कविता बन जाए–

शब्द – लड़कियां, खुशबू, मां, दहशत, दंगा, बर्बरता, धर्म, दफन, देश, नफरत, प्यारा, मिठाई, शहनाई, अरमान, सपने, जीवन-संघर्ष, खिलखिलाहट, तूफान, चीखें, आग, धमाका, ध्वंस, फूल, मुस्कान, आवाजें, बच्चे।

लड़कियां खेल रहीं थीं। उनमें एक लड़की खुशबू थी। वह मां की बहुत दुलारी थी। उसे थकान लग रही थी, सो वह चुपचाप जा कर सो गई। तभी अचानक गांव में आग लग गयी। दहशत से लोग चिल्ला रहे थे। तरह-तरह की आवाजें सुनकर खुशबू की मां बाहर आई, देखा तो हैरान रह गई, नफरत से भरे हुए पड़ोसियों के साथ कुछ बाहरी दंगा कर रहें हैं। कोई कहता आग तुमने लगाई, मैं तुम्हें जिन्दा दफ़न कर दूंगा। कोई किसी को बर्बरता से मारता। तभी अचानक धमाका हुआ, हड़बड़ाकर खुशबू जाग गई, उसने महसूस किया जलने की तेज गंध और धुआं व तरह-तरह की चिल्लाहटें। खुशबू व्याकुल होकर बाहर भागी, और मां से पूछा – मां ! ये लोग क्या कर रहें हैं? मां ने कहा ये लोग धर्म के नाम पर एक दूसरे को मार-पीट रहें हैं...

तूफ़ान की तरह खुशबू दौड़ती हुई दंगाइयों के बीच पंहुच गई, उसे न डर था, न लज्जा। वह जोर से चिल्लाकर बोली – तुम सब एक ही देश के रहने वाले हो, बल्कि अगल-बगल रहने वाले पड़ोसी आज भी हो, कल भी साथ रहोगे फिर यह एक-दूसरे से नफरत क्यों ? हम सब का देश एक है, हम सबको इससे प्यार भी है, फिर यह जात-पांत, ऊंच -नीच, धर्म के नाम पर झगड़ा क्यों ? झगड़ा दूरी बढ़ाता है, प्यार जोड़ता है। हमारा गांव एक रहा है। इसे आदर्श बनना चाहिये। खुशबू के बोलने के ढंग और उसकी बातें सुनकर लागों के हाथ थम गये। वे लज्जित हुए और धीरे-धीरे वहां से चले गए। अगले दिन प्रधान ने मीटिंग बुलाई, खुशबू की प्रशंसा की गांव में भाई चारा और एकता दर्शाने वाला नाटक खेला गया। पूरे गांव के बच्चों ने सजाया, शहनाई बजी, मिठाई बंटी और खिलखिलाहटें गूंज गईं। खुशबू की मां ने कहा – जो सपने हमने देखे थे, उसे तुमने पूरा कर दिखाया। यही जीवन-संघर्ष है। इक छोटा बच्चा भी बहुत बड़ा काम कर सकता है अगर वह ठान ले।

– कु. पल्ल्वी, कक्षा 8
इरम इण्टर कालेज, लखनऊ

पूंछ की शान

जीव जन्तुओं के जीवन में पूंछ बहुत ही जरुरी अंग रहा है। यह बहुत ही शानदार, जानदार और महत्व की चीज है।

मछली अपनी पूंछ के बल पर ही पानी में सरासर दौड़ती और तेजी से मुड़ती है।

पक्षी अपनी पूंछ से आसमान में दिशा बदलने का काम लेते हैं।

बन्दर की पूंछ उसकी उछल कूद में उसका संतुलन बनाती है।

गिलहरी अपनी लम्बी गुच्छेदार झबरैली पूंछ की वजह से ही बड़ी फुर्ती से भाग लेती है। एक डाली से दूसरी डाली पर कूदती फिरती है। सर्दियों में गरमाहट के लिए यह अपनी पूंछ को शरीर पर लपेट लेती है।

कंगारु की दुम सख्त और मजबूत होती है। लम्बी छलांग लगाने में यह उसकी बहुत मदद करती है। बैठने के समय कंगारु अपनी दुम पर आराम से शरीर को टिका लेता है।

गाय की पूंछ लम्बी और गुम्छेदार होती है। गाय इससे मक्खी, मच्छर और कीट-पतंगे उड़ाती है।

कुत्ता अपने भावों को – खुशी और प्यार का – दुम हिलाकर और भय को पूंछ टांगो में दबाकर व्यक्त करता है।

मोर अपनी लम्बी पूंछ को मोरनी को खुश करने के लिए फैलाता लेता है।

छिपकली की पूंछ कुछ कमजोर होती है, अगर यह टूट जाये या कट जाए, तो उसका पुनर्जन्म हो जाता है।

बिच्छू का डंक उसकी पीछे से मुड़ी हुई लम्बी सी पूंछ में ही छिपा होता है। बिच्छू अपने भोजन के लिए कीट पतंगो का शिकार इसी डंक से करता है।

– पहले आदमी की भी पूंछ हुआ करती थी। फिर जैसे जैसे आदमी ने पूंछ का इस्तेमाल छोड़ा, उसकी पूंछ छोटी होते होते बिल्कुल ही गायब हो गई – और तब पूंछ रहित वनमानुष ने दो पैरों पर सीधे चलकर दो हाथों से नई सभ्यता की शुरुआत की। हालांकि पूंछ का शानदार व्यक्तित्व अपनी जगह बरकरार है।

नन्हीं पेंसिल ने बनाया

लेनिन

जन्मदिन–२२ अप्रैल १८७०

गोलू
जाड़ा लग रहा है
चलो तुम्हें भी
कपड़े पहनाते हैं
ऊनी कपड़े
ऊनी कपड़े
हरा
दिया
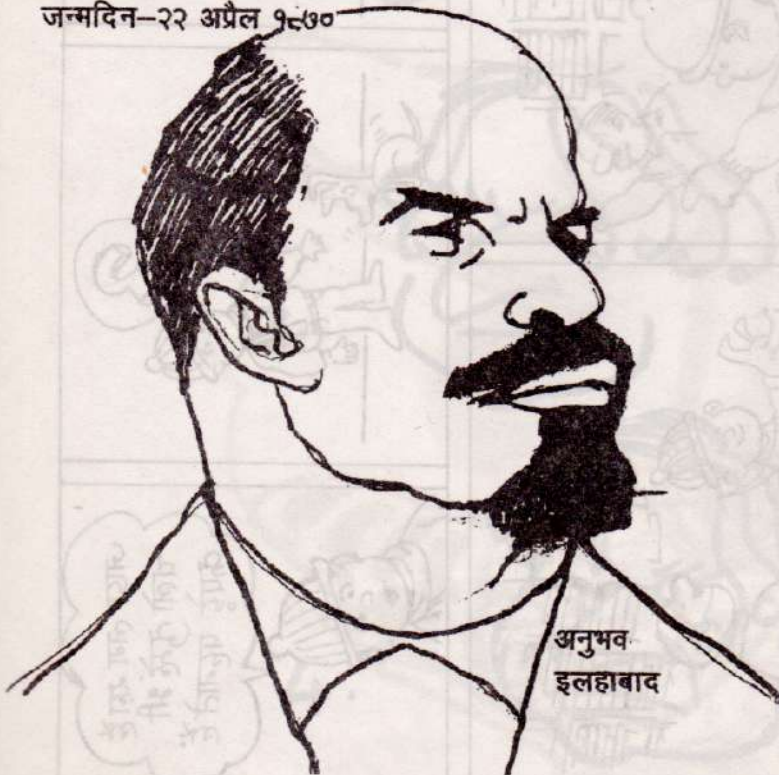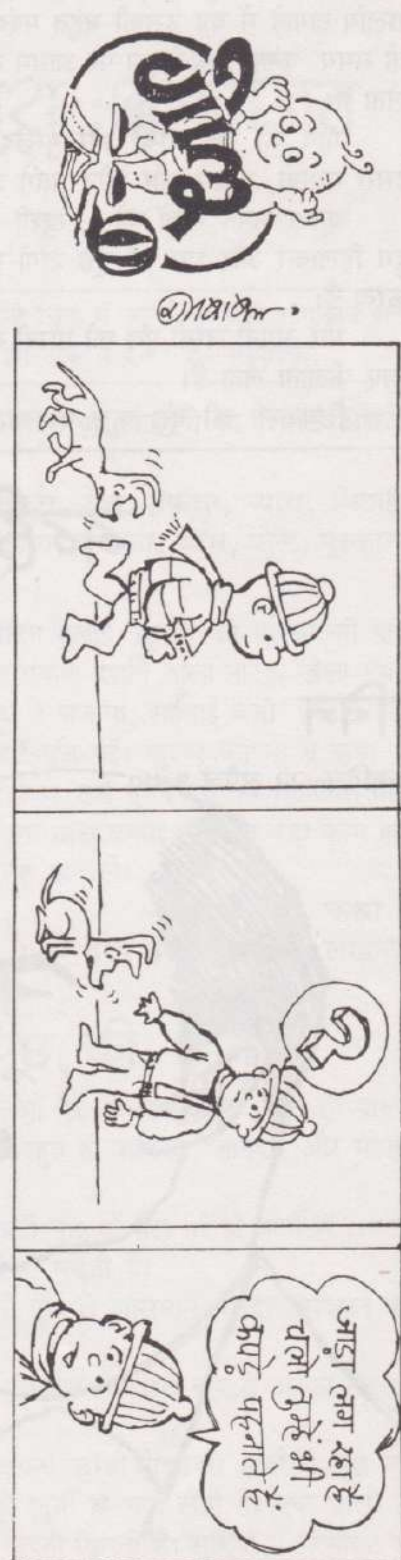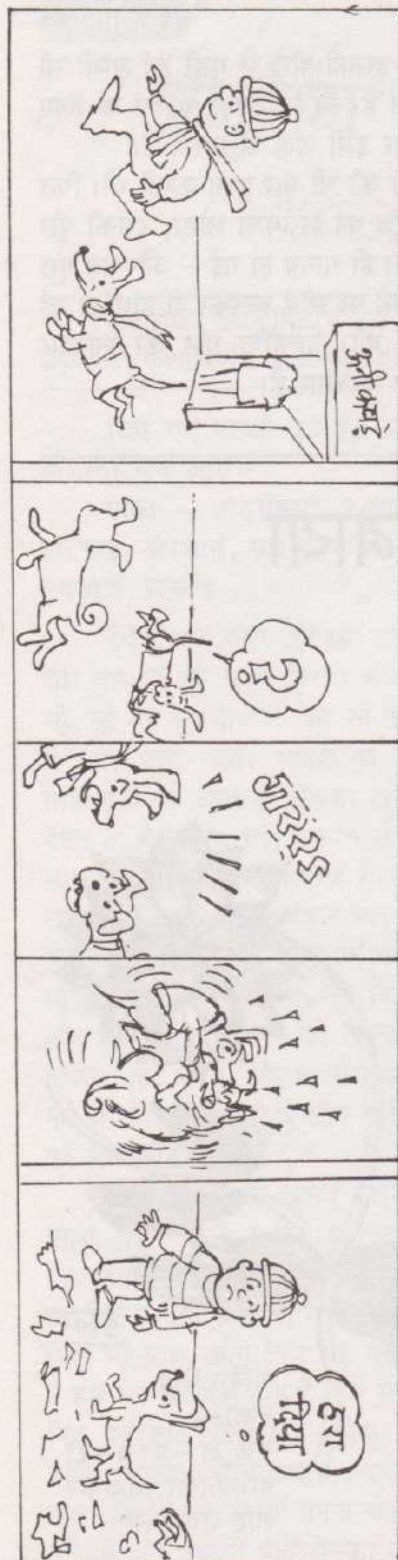
कार्टून कैसे बनाएं

राष्ट्रपति अब्दुल कलाम

1.

2.

3.

4.

चित्र कैसे बनाएं

बालकूची . . .

Anurag Bal Patrika OCTOBER-DECEMBER 2002 RNI No. 65584/99